श्री शिव महिम्न स्तवराज योग तन्त्र भाष्य

महीं पादाघाताद् व्रजति सहसा संशयपदम्।

श्री विद्येश्वर योगीराज श्री शक्तिदत्त शास्त्री

श्री शिव महिम्न स्तवराज योग तन्त्र भाष्य

भाष्यकार :

योगीराज श्री शक्तिदत्त शास्त्री

सम्पादक :

वैद्य श्रीनारायण शास्त्री,

दर्शनाचार्य, आयुर्वेदाचार्य, एम० ए०, डी० आई० एम० एस०,
भू० पू० अध्यक्ष एवं प्रफेसर, मौ० सिद्धान्त, संहिता,
पंचकर्म, योग, निसर्गोपचार विभाग, राजकीय
आयुर्वेद महाविद्यालय, लखनऊ

प्रकाशक :

विद्येश्वर योगीराज श्री शक्तिदत्त शास्त्री

श्री शिवमहिम्न स्तवराज
योगतन्त्र भाष्यम्

प्रथम संस्करण : बसन्त पंचमी सं० २०४१ वि०

© सर्वाधिकार लेखक के अधीन

प्राप्ति स्थान : मारवाड़ी सेवा समिति, काठमाडौं, नेपाल
तथा रक्षालय, २६ मोती नगर, लखनऊ

मूल्य : पच्चीस रुपये

प्रकाशक : विद्येश्वर श्री शक्तिदत्त शास्त्री

मुद्रक : अनुज प्रिन्टर्स, सी-११०६ महानगर,
लखनऊ–२२६ ००६

अमरयोगी शिवावतार बाबा हेड़ाखानजी महाराज

श्रीत्रिपुर सुन्दर्य्यै नमः

धन्यवाद ज्ञापन

भारतीय राजनीतिक क्षेत्र के श्रेष्ठ विद्वान्, स्व०श्री नेहरू जी के घनिष्ठ विश्वस्त तथा प्रशासक क्षेत्र में द्वितीय चाणक्य, रार्जाषि महामहिम श्री चन्द्रेश्वर प्रसाद नारायण सिंह जी महोदय श्रेष्ठ प्रशासक के अलावा अध्यात्म के भी गम्भीर अन्वेषक और धर्म के प्रति दृढ़ आस्था के व्यक्ति हैं। राज-तन्त्रों का संचालन करते हुए भी हृदय में परमहंस भावस्थित है इनका व्यक्तित्व।

श्री शिव महिम्न भाष्य के प्रकाशन में इनका पूर्ण सहयोग प्राप्त कर मैं कृतकृत्य हुआ–भगवान् श्री सदाशिव और सदगुरुदेव श्री मुनीन्द्र हेड़ाखान बाबा इन्हे दिव्य चिन्मय प्रकाश से आप्लवित करें यही मेरी हार्दिक सद्भावना है।

–विश्वमानवों का नम्र अनुचर
योगीराज श्री शक्तिदत्त शास्त्री

विदेह-वृत्तिस्थ संस्कृत संस्कृति-समुद्धार परायण
महामहिम श्री चन्द्रेश्वर प्रसाद नारायण सिंह जी,
राज्यपाल, उत्तर प्रदेश ।

श्री सद्गुरवे नमः

सम्पादकीयम् किञ्चित्

शिवमहिम्नस्तोत्रापर नामा "धूर्जटिस्तोत्र" की गरिमा तथा उस पर योगिराज श्री शक्तिदत्त शास्त्री जी महराज कृत तन्त्रपरक अलौकिक महाभाष्य के सम्पादन का भार उठाने में मैं अपने को यद्यपि बहुत ही असमर्थ पाता हूं, फिर भी श्री शास्त्री जी एवं महामहिम राज्यपाल श्री चन्द्रेश्वर प्रसाद नारायण सिंह जी दोनों ही मेरे परम श्रद्धेय हैं, अतः "आज्ञा गुरुणां ह्यविचारणीया" के अनुसार शक्तिभर इन महात्माओं के आदेश के पालन का प्रयास कर रहा हूं।

शिवमहिम्न स्तोत्र

क्लेश के तीव्रतर संवेगों के सद्यः शिथिलीकरण की अपूर्व शक्ति से सम्पन्न होने तथा समर्पण एवं कृतज्ञता के ज्ञापन का सरल और आपामरहृदयसंवेद्य माध्यम होने के कारण साहित्य की विविध शाखाओं में स्त्रोत्र साहित्य का अति-विशिष्ट स्थान है। उनमें भी उक्त स्तवराज का स्थान तो और परम विशिष्ट है। इस पर सम्पादकीयम् की अग्रिम पंक्तियों एवं भाष्य में भी बहुत विस्तार से प्रकाश डाला गया है।

श्री पुष्पदन्ताचार्य और महिम्न स्तोत्र

भारत के अनेक प्राचीन आचार्यों की तरह संभवत: आत्मगोपन की भावना से ही पुष्पदन्त ने भी अपने जीवनवृत्त पर विस्तार से कुछ नहीं लिखा है, अतः उनके बारे में 'यह ऐसा ही है'' इस प्रकार से कुछ कहना कठिन है। फिर भी उनकी रचना तथा पूर्वापरवर्ती साहित्य सन्दर्भों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि :–

१- श्री पुष्पदन्त गन्धर्व लोक के शासक रहे और नागलोक के स्वामी भगवान शंकर के अन्तरंग सहयोगियों में से थे। इन पर शंकर तथा पार्वती दोनों ही अपार विश्वास करते थे। शंकर के यहां इनका अप्रतिहत प्रवेश था।

२- यह सिद्ध योगी थे, ऋद्धि सिद्धियां इन्हें प्राप्त थीं। इसी के सहारे यह अदृश्य होकर नन्दी की नजर बचाकर शंकर के अन्त:पुर में प्रविष्ट होकर शंकर और पार्वती का गुप्त वार्तालाप सुन सके थे और अपनी पत्नी जया को जो पार्वती की प्रिय सखी भी थीं, सुनाया था। भेद खुल जाने से इस छद्मचरत्व के लिए ही पार्वती जी ने इन्हें स्वर्ग[1] से मर्त्य-लोक में अवतरित होने का दण्ड दिया था।

---

१. पुष्पदन्त तथा गंधर्व, नागलोक आदि के भूगोल की संक्षिप्त जानकारी परमावश्यक है। कश्यप सागर से लेकर बर्मा एवं स्याम देशतक हिमालय पर्वत का जो विस्तार है उसके बहुत बड़े भाग में स्वर्ग भूमि का विस्तार था। देव, (सुर) गन्धर्व, यक्ष, किन्नर एवं नाग यह पाँच जातियाँ (पञ्चजना:) इसके निवासी थे।

३. श्री पुष्पदन्त वहुत वड़े कूटनीतिज्ञ थे, इसीलिए शंखचूड युद्ध के अवसर पर शंकर ने इन्हें दूत वनाकर दैत्यराज के पास भेजा था।

४. स्तोत्र की रचना का उद्देश्य भगवान् शंकर के साथ किए गए छल एवं तज्जन्य वाचादोष के परिहारार्थ अपराध क्षमापन की भावना है जिसका संकेत "ममत्वेतां वाणीं गुणकथन पुण्येन भवतः" तथा "पुनामीर्त्थेस्मिन पुरमथन बुद्धिर्व्यवसिता" में है।

फारस का उत्तरी भाग, रूसी तुर्किस्तान, अफगानिस्तान का उत्तरी भाग **गन्धर्व लोक** था। पामीर पठार, फारस, कश्मीर, हिमाञ्चल प्रदेश का उत्तरी भाग **देव लोक** था। इसके नीचे का पर्वतीय कुल्लू मनाली उत्तरा खण्ड आदि के आस-पास का भाग किन्नर देश रहा। नेपाल का पर्वतीय पश्चिमी तथा मध्यभाग **यक्षप्रदेश** था। कैलाश,मानसरोवर तथा तिब्बती पठार पर नागलोक फैला था। यद्यपि बहुसंख्या के विचार से प्रदेशों का ऐसा विभाग किया जाता है लेकिन सभी जातियों का सर्वत्र आना-जाना, रहना-बसना होता था। यही कारण है कि देव जाति के दक्ष प्रजापति का गुरुकुल नागलोक की सीमा में था जहाँ अश्विनी कुमारद्वय जैसे देव वैद्यों की शिक्षा-दीक्षा हुई थी। जनसंख्या बढ़ने के साथ ही जीवन की विभिन्न समस्याओं के समाधान के लिए स्वर्ग की यह जातियाँ कालन्तर मे पहाड़ से नीचे तराई मे उतर कर बसती गईं और मर्त्यलोक या नरक की बस्ती बनती गई। आज भी दीर्घ जीवन, शान्ति एवं स्वास्थ्य की दृष्टि से पर्वतीय भूमि तराई या मैदानी इलक़ो की अपेक्षा श्रेष्ठ मानी जाती है, लेकिन जीवनयापनार्थ पर्वतेतर भूभाग का अपना अलग महत्व आज भी प्रमाणित है। स्वर्ग की

५. मर्त्यलोक में देवदत्त, वररुचि (कात्यायन) आदि के रूप में उनकी उत्पत्ति आचार्य वर्ष से पाटलिपुत्र में रहकर विद्या-अध्ययन, पाणिनि का साहचर्य आदि तीन जन्मों की कथा विस्तारपूर्वक "सरित्सागर, एवं गुणाढ्यकृत "वृहत्कथा मंजरी" में उपलब्ध है। इसके अतिरिक्त इस सम्बन्ध में "महिम्नस्त्रोत," काशी संस्कृत सीरीज सं २१, बंगला "हिन्दू" पत्रिका वर्ष १७/४, स्कन्दपुराण प्रभास खण्ड, श्री महाभारत पर्व ७,६ तथा अन्य कई स्थल, स्कंद पु०, काशीखण्ड, लिंग पुराण उत्तरार्ध, श्रीमद् भागवत, ज्योतिर्विदाभरण", अमरकोष, "दिग्गज वर्णन", "चरितावली" (बाबू भारतेन्दु हरिश्चन्द्र) "इतिहास तिमिर-नाशक", (बाबू शिवप्रसाद सितारे-हिन्द) इन्डो आर्यन "नं०१,

---

श्रेष्ठता एवं मर्त्यलोक की हीनता का संभवतः यही मूल कारण है। लोग आज भी मैदानों में कमा-धमा कर शान्ति प्राप्ति के लिए पहाड़ पर जाना चाहते हैं। यह बात और है कि कालक्रम से अब स्वर्गभूमि भी संकटमय होती जा रही है। स्वर्ग एवं मर्त्यलोक के भूगोल एवं इतिहास के बारे में अधिक जानने के लिए महाभारत वनपर्व, कठोपनिषद्, निरुक्त, पू०, महाभा० महाप्रास्था० पर्व, स्वर्गारोहण प्रकरण, अमरकोष, कुमारसंभव, चरक संहिता, काश्यप संहिता (कल्प०) म० भा० आदि पर्व अ० ६३, ब्रहज्जोतिषार्णव, रघुवंश, बाल्मीकि रामा०, किरातार्जुनीयम्, "वेदधरातल", 'वृहत्तर भारत' (श्री चन्द्रगुप्त वेदालंकार) म० भा० सभापर्व, "भारत का सांस्कृतिक इतिहास" (आचार्य चतुरसेन शास्त्री), "भारत के प्राणाचार्य" (श्रीरत्नाकर शास्त्री कृत) छान्दोग्य एवं वृहदारण्यकोपनिषद्' एवं वेद संहिताएं आदि दृष्टव्य हैं।

(डा० राजेन्द्र लाल मित्र) तथा "भारत का इतिहास" (सर आर० सी० दत्त) आदि ग्रंथ दृष्टव्य हैं।

६- महिम्न स्त्रोत में शिव की महिमा तथा ब्रह्माण्ड की कई महत्वपूर्ण घटनाओं का बीजात्मक संकेत है। उन्हें विस्तार से समझे बिना स्त्रोत का मर्म ठीक से समझ में नहीं आता। कतिपय संकेत बीजों का मूल संदर्भ परिशिष्ट में दिया गया है।

महिम्नस्तोत्र पर "योगतन्त्र भाष्यम्" तथा उसके कर्ता

जहां तक मेरी जानकारी है महिन्मस्तोत्र पर यह भाष्य अपने ढंग का पहिला प्रयास है और इसमें सन्देह नहीं कि इस भाष्य में वर्णित तथ्य अधिकांशतः स्वानुभूतिजन्य हैं तथा योगतन्त्र साधकों को इससे बड़ा सहारा मिलेगा, ऐसा मेरा विश्वास है।

१- योगिराज श्री शक्तिदत्त जी शास्त्री एक सिद्ध योगी हैं, तन्त्रयोग पर उन्होंने अनेक दिव्य विभूतियों के सानिध्य में तथा स्वयं भी लम्बी साधना की है। अतः आप्तवाक्य होने के कारण यह भाष्य मननीय एवं आचरणीय है।

२- तन्त्रशास्त्र एवं योग साहित्य की विविध शाखाओं के साहित्य पर उन्हें अपूर्व ज्ञान है।

३- स्तोत्रों के साथ यंत्रों, पूजाविधियों जप आदि का जो विधान दिया गया है वह यदि व्यवहार में लाया जाय तो लोकमंगल की सिद्धि होगी–ऐसा विश्वास करना चाहिए।

यदि किसी को ऐसा विश्वास न भी हो तो भी परीक्षणात्मक रूप में उन्हें अपनाने में तो विसंगति नहीं दिखाई देती, लेकिन यह सभी बातें सद्गुरु के सन्निध्य में रहकर सावधान साधना के द्वारा ही संभव हैं।

४- भाष्यकार अमरयोगी शिवावतार बाबा हेड़ाखान के प्रमुख कृपापात्रों में से हैं। बाबा की दिव्य विभूतियों की कोई इयत्ता नहीं है। योगीराज में स्तोत्र के गुप्त रहस्यों के साक्षात्कार की शक्ति गुरुकृपा तथा साधना से प्राप्त हुई हैं।

इस पुस्तक के प्रकाशन प्रकरण में महामहिम श्री चन्द्रेश्वर प्रसाद नारायण सिंह, राज्यपाल उत्तर प्रदेश के बारे में संक्षिप्त उल्लेख इसलिए किया जा रहा है कि इससे पाठकों के समक्ष ऐसे अज्ञात तथ्य का उद्‌घाटन होगा जो कि लोक-कल्याण साधना-पथ का एक प्रेरणादायक प्रसङ्ग सिद्ध होगा।

उत्तर प्रदेश के वर्तमान राज्यपाल म० म० श्री चन्द्रेश्वर प्रसाद नारायण सिंह जी को निकट से और सृजनात्मक भावना से जिन्हें देखने-सुनने का सुअवसर मिला है वह निश्चय ही यह जानते हैं कि उनमें विश्वतोमुख संतों के गुणों का बहुत ही संतुलित भाव पाया जाता हैं। चिकित्सक रूप में जब से मुझे उनका सान्निध्य प्राप्त हुआ है तब से मैं निरन्तर यह अनुभव करता रहता हूं कि इस संत में लोकसंग्रह की मात्रा इतनी अधिक है कि यदि समय से उसका सदुपयोग न किया गया तो यह

भारत की प्राचीन गौरवमयी परम्परा के पुनरुद्धार प्रक्रिया में भारी क्षति होगी । क्या आयुर्वेद, क्या ज्योतिष, संस्कृत अथवा कोई भी भारतीय संस्कृति का पक्ष हो, उसके गौरव की पुन: प्रतिष्ठा के प्रति वह सदैव बेचैन रहते हैं, जितना बनता है उसके लिए अनवरत रूप से कुछ न कुछ करते रहते हैं । स्वदेश का आयुर्वेद जगत् तो भलीप्रकार उनकी आयुर्वेदोद्धार की इच्छा से परिचित है जिसके निमित्त उन्होंने प्रदेश में आते ही "आयुर्वेद शिक्षा-सुधार उच्चस्तरीय शासकीय समिति" का गठन कराया था और प्रयास भी कर रहे हैं कि समिति के सुझाओं के अनुरूप शासन एवं समाज आयुर्वेद के प्रति व्यवहार करे ।

अभी थोड़े ही दिन पहले राजभवन में देश के ख्यातिप्राप्त संस्कृत विद्वानों के सम्मान का आयोजन सम्पन्न हुआ था । उस अवसर पर भी उन्होंने विद्वानों, शासनाध्यक्षों एवं सर्वसाधारण से संस्कृत एवं संस्कृति के विभिन्न पक्षों के पुनरुद्धार के लिए मार्मिक अपील की थी । आयुर्वेद के लिए तो उन्होंने विशेष बल दिया था और चरकोक्त सूक्तियों को प्रस्तुत करते हुए बताया था कि आयुर्वेद की सहायता से कितना महत्वपूर्ण व्यक्तिगत एवं समाजगत कल्याण संभव है ।

महामहिम की इस जागरूक वृत्ति का ही एक सुपरिणाम प्रस्तुत पुस्तक है । पूज्य शास्त्री जी कृत महिम्न स्तोत्र के इस तन्त्रपरक भाष्य के बारे में जब मैंने यह बताया कि "यद्यपि

आज तक इस स्तोत्रग्रंथ पर अनेक भाष्य विविध भाषाओं में हो चुके हैं– यहां तक कि इस ग्रंथ की महिमा से ही अभिभूत होकर स्वनामधन्य दर्शनचक्र चक्रवर्ती श्रीमधुसूदन सरस्वती जी तक ने इस पर "मधुसूदनी" व्याख्या लिखी है–फिर भी तन्त्र-परक इतनी सशक्त व्याख्या का अभी तक पता नहीं चलता।" तो तुरन्त ही म०म० ने कहा "तब तो इसके प्रकाशन का उत्तमोत्तम प्रवन्ध होना ही चाहिए। मैं चेष्टा करूँगा कि शासन की सहायता से हो, नहीं तो मैं स्वयं ही इसका प्रबंध करूँगा। आप इसके प्रकाशन का कार्य जितनी जल्दी हो शुरू कर दें।"

प्रदेश में आते ही भारतीय दार्शनिक शोध संस्थान की स्थापना म०म० ने इस उद्देश्य से कराई है कि वह माध्यम ढूँढा जा सके जिससे कि सर्वसाधारण के जीवन को उदात्त दार्शनिक मान्यताओं तथा लोक-कल्याणकारी विद्याओं के मूलभूत उद्देश्यों से अनुप्राणित एवं आविष्ठ करने का मार्ग प्रशस्त किया जा सके। अपने में यह अभिनव एवं देश की अनुसंधान-परम्परा में पहिला प्रयास है।

परतन्त्रता के युग से चली आ रही शिक्षा की अकल्याण-कारी पद्धति में आमूलचूल परिवर्तन करके राष्ट्र में तेजस्वी स्वावलम्बी भारतीय संस्कृति के मंगलमय पक्षों को उजागर करने वाले नागरिक पैदा करने के उद्देश्य से समीचीन शिक्षा को सभी स्तरों से पुनः प्रतिष्ठित करने का भी भगीरथ प्रयास म०म० कर रहे हैं। प्रसन्नता की बात है कि उक्त दोनों ही कार्यों

को सम्पन्न करने की दिशा में श्री किरीट जोशी जी (भारतीय शिक्षा मंत्रालय) सन्तोषजनक प्रयास कर रहे हैं। देश-विदेश के माने-जाने विद्वानों का उन्हें सहयोग भी मिल रहा है।

प्रदेश के वैधानिक शासकीय प्रधान होने के नाते जिन लोकोपकारी समितियों के राज्यपाल जी प्रधान हैं उनमें उल्लेखनीय सुधार हुआ और सक्रियता बढ़ी है। म० म० जी वाराणसी में कई करोड़ की लागत से एक संस्कृत प्रतिष्ठान की स्थापना का आयोजन कर रहे हैं। उसके माध्यम से संस्कृत भाषा की विभिन्न शाखाओं में आदर्श अध्ययन तथा शोध का प्रबन्ध देश-विदेश में किया जायगा।

आयुर्वेद के लुप्तप्राय किन्तु जीवनदायिनी चिकित्सा-विधियों के समुत्थानार्थ 'सप्तऋषि-स्वास्थ्य-साधना-आश्रम,' सतरिख, बाराबंकी की स्थापना भी आप की ही महती कृपा का फल है।

कई बार राजभवन परिसर में म० म० के साथ घूमते हुए सहज वार्तालाप के दौरान मैंने स्वयं भी यह पाया है कि क्या जड़ी बूटी, क्या फलफूल, या पशु-पक्षी क्या कोई कलात्मक रचना या खेतीबारी, पशुपालन जैसी सर्वसाधारण बातों में भी उनकी सहानुभूतिमयी गहरी पैठ है और अपनी जानकारी औरों को बताने में उन्हें बड़ा आनन्द भी आता है। उन्हें इस बात का बड़ा खेद भी है कि समाज की नई पीढ़ी का चिन्तन और आचरण दिनों-दिन संकीर्ण एवं अनुदार बनता जा रहा

है। अतः ऐसे हर अवसर पर वह मनसा-वाचा-कर्मणा अपने को विना हिचक अर्पित करने को प्रस्तुत रहते हैं जिसका सम्बन्ध भारतीय गरिमा एवं समृद्धि के उन्नयन से हो। अनेक अवसरों पर उन्होंने मुझसे कहा कि "संस्कृत एवं संस्कृति के लिए सच्चे दिल से कुछ करने की इच्छा रखने वाले विद्वानों को खोजो, नियोजित करो, मैं उनके सम्मान एवं निर्वाह का प्रवन्ध करूँगा।"

एक ओर जहाँ गहन से गहन दार्शनिक गुत्थियों की ऐसी सरल एवं सुबोध व्याख्या म० म० जी कर देते हैं कि ऐसा लगता है कि इन्होंने जीवनभर दर्शनशास्त्र को पढ़ाया है, वहीं साधना के विविध प्रस्थानों मे होने वाले विविध विघ्नों एवं उनके समाधान की ऐसी अनुभूति भी बताते हैं कि यह मानने को विवश हो जाना पड़ता है कि यह इनकी स्वानुभूति के अतिरिक्त और कुछ हो नहीं सकता। यहीं पर यह जिज्ञासा भी उठती है कि राजकाज जैसे व्यस्त सांसारिक दायित्वों के आदर्श निर्वाह के साथ ही कोई व्यक्ति मात्र एकाग्र साधना से लभ्य इतनी अद्‌भुत आध्यात्मिक सम्पत्ति का धनी कैसे हो सकता है, तो एक समाधान सामने आता है :–

"भव प्रत्ययो विदेहप्रकृतिलयानाम्।" यो०सू० १/१९

अर्थात् :–जो पूर्व जन्म में साधना करते-करते विदेहावस्था को प्राप्त कर चुके थे एवं प्रकृतिलय तक की स्थित पर पहुंच चुके थे किन्तु कैवल्य पदप्राप्ति के पूर्व ही मृत्यु हो गई तो इस प्रकार के योगियों का जब पुनर्जन्म होता है तो वे योगभ्रष्ट

साधक पुन: योगियों या श्रीमानों के कुल में जन्म ग्रहण करते हैं तो उन्हें पूर्व जन्म के संस्कारों के प्रभाव से पूर्वस्थिति का ज्ञान हो जाता है (गीता ६/४२/४३) और वे इस जन्म में साधन-परम्परा के बिना ही यथेच्छ समाधि प्राप्त करते रहते हैं। उनकी यह समाधियाँ उपाय-जन्य न होने के कारण 'भव प्रत्यय' अर्थात् पुनः जन्म लेना ही कारण है जिसका ऐसी समाधि कही जाती हैं। म०म० ऐसे ही पुरुष हैं–ऐसा मेरा विश्वास है।

इतने उदारचेता सन्तप्रकृति महामहिम राज्यपाल श्री चन्द्रेश्वर प्रसाद नारायण सिंह जी के व्यक्तिगत जीवन-वृत्त से सम्बन्धित जिज्ञासा की निवृत्ति के लिए संक्षेप में इस सम्बन्ध में भी प्रकाश डालने का प्रयास किया जा रहा है, यद्यपि इसके लिए महामहिम की अनुमति बहुत ही कठिनाई से प्राप्त कर सका हूं।

आज से लगभग ५०० वर्ष पूर्व एक तपोनिष्ठ परम करुणामूर्ति ब्राह्मण आचार्य जगन्नाथ दीक्षित जी महाराज नैमिषारण्य से चलकर वर्तमान जिला सारन (छपरा, बिहार) के एकसार नामक स्थान पर बस गये थे। वहां वह एक ऋषि के रूप में पूज्य हुए। सर्वसाधारण के नानाक्लेशों का निवारण करने के बारे में अनेक कथाएँ आज भी उनसे सम्बन्धित जन-साधारण में प्रचलित हैं। कहते हैं कि उन्होंने अपनी कृपा से तत्कालीन किसी नेपाली राजा की गलित कुष्ठ से मुक्ति कीचड़ का लेप करने को कहकर कर दिया था।

उन्हीं आचार्य के वंशज परसागढ़, चैनपुर, बगौरा आदि चार स्थानों पर फैले और विद्या के साथ ही भौतिक समृद्धि के चरम शिखर पर आरूढ़ हुए। इस वंश की तेजस्विता के कारण ही तत्कालीन मुगल शासकों को इनसे संधि करनी पड़ी और इस विषय का एक प्राचीन फरमान कलकत्ता के प्राचीन अभिलेखागार में आज भी सुरक्षित है। ब्रह्मस्व के साथ शत्रुओं से निरन्तर युद्ध करते रहने के कारण तेज की प्रतीक सिंह पदवी इस वंश के लोगों के नाम के साथ लगने लगी। म०म० राज्यपाल जी का जन्म उक्त परसागढ़ शाखा के पवित्र कुल में श्री सरयू प्रसाद नारायण सिंह जी के तृतीय पुत्र के रूप में सन् १९०१ में हुआ।

मुजफ्फरपुर जिले में नेपाल की सीमा पर सुरसन एक रियासत दार्शनिक जगत् के प्रसिद्ध प्राचीन विद्वान् श्री बनमाली झा के वंशजों की थी। उसी वंश के शासक श्री कृष्ण किशोर नारायण सिंह से म० म० के पिता की बुआ का विवाह हुआ था।

उन्हें कोई सन्तान नहीं हुई। अतः मात्र ४१ वर्ष की छोटी आयु में ही श्री कृष्ण किशोर नारायण सिंह जी ने श्री चन्द्रेश्वर प्रसाद नारायण सिंह को अपना दत्तक पुत्र बनाया था। वहां का भी सारा वातावरण धर्मानुष्ठान, विद्वानों के समागम एवं यज्ञादि कर्मकाण्डों से ओतप्रोत रहता था। फलतः सहज मेधावी एवं सतोगुणी बालक श्री चन्द्रेश्वर प्रसाद नारायण सिंह

जी की भी रुचि इसमें स्वभावतः रही। विद्वानों की संगति भी मिलती रही। संभवतः बाल्यकाल की यह परिस्थिति भी इनके स्वभाव के विलक्षण विकास में सहायक बनी। उभय कुलों की महानता का प्रभाव ऐसा होना ही चाहिए।

कहा भी है :–"**शुचिता सज्जन मैत्री महाकुले जन्म।**
जागृति विमल विवेकः अभ्युदयाय विनाप्यर्थैः॥"

सुरसन में ही पहिले घर पर फारसी, संस्कृत एवं अंग्रेजी आरम्भिक शिक्षा अध्यापकों द्वारा इन्हें प्राप्त हुई। क्रमश जी० वी० बी कालेज पटना एवं कलकत्ता विश्वविद्यालय से अध्ययन करते हुए सर आशुतोष मुकर्जी के समय में एम० ए० की उपाधि सभी विषयों में प्रथम श्रेणी से प्राप्त की। कई स्वर्ण पदक एवं पुरस्कार प्राप्त करते रहे। स्मरणशक्ति इतनी तीव्र थी कि बचपन में ही सैकड़ों स्तोत्र और दुर्गासप्तशती के अनेक अध्याय कंठस्थ कर लिए। सूक्तियां, उदाहरण, एवं प्रेरणादायक कहानियां तो इतनी याद हैं कि आज भी कोई किसी समय किसी भी प्रकरण पर सुन ले।

शिक्षा की समाप्ति के बाद जिन-जिन विद्यालयों से म०म० का पूर्व सम्बन्ध रहा उनकी प्रोन्नति तथा प्रबन्ध में इन्होंने सरकारी एवं निजी रूप में अनेक जिम्मेदारियों का निर्वाह करते हुए स्मरणीय कार्य किया है। मुजफ्फरपुर जिला परिषद् के अध्यक्ष के रूप में इनके द्वारा किये गये सुधार आज भी उदाहरण के रूप में स्मरण किये जाते हैं।

बिहार के विनाशकारी भूकम्प के समय तथा बाद में भी इनके द्वारा की गई जनसेवा से प्रभावित होकर ही तत्कालीन ब्रिटिश शासन ने इन्हें सी० आई० ई० एवं सर की उपाधि दी थी।

स्वतन्त्रता-प्राप्ति के बाद भी इन्होंने जापान, नेपाल में सफल भारतीय राजदूत जैसे गरिमामय पद का निर्वाह किया है। नेपाल से राणाशाही के स्थान पर शाहराजवंश को पुनः सत्ता दिलाने का दुर्वह भार आप के ही जैसे समर्थ राजनीतिज्ञ के वश की बात थी। उत्तर प्रदेश में आने के पूर्व साढ़े पांच वर्ष तक पंजाब में राज्यपाल रह चुके हैं। पाण्डिचेरी में भी लम्बे समय तक रहते हुए वहां के आश्रम की व्यवस्था के सुधार में उल्लेखनीय योगदान किया है। आज भी प्रदेश तथा देश के शासनतन्त्र के संचालन तथा नीति-निर्धारण में आप का महत्वपूर्ण स्थान है।

महामहिम राज्यपाल श्री चन्द्रेश्वर प्रसाद नारायण सिंह जी के वरद हस्त एवं आशीर्वाद के अलावा इन्हीं की कृपा से इस पुस्तक के प्रकाशन में म० म० राज्यपाल जी के सचिव श्रीयुत विजयकृष्ण जी सक्सेना, श्रीमान् रमेश चन्द्र जी त्रिपाठी, शिक्षा सचिव, उत्तर प्रदेश शासन एवं लायन श्री पद्मधर जी मालवीय ने अमूल्य परामर्श देकर, कला महाविद्यालय के आचार्य श्री योगेन्द्रनाथ वर्मा जी 'योगी' ने मुखपृष्ठ एवं यन्त्रों का रेखांकन करके, डा० उमाशंकर जी त्रिपाठी व्याकरणाचार्य ने सम्पादन में सहायक होकर, म० म० राज्यपाल जी के परिसहाय

श्री राजकृष्ण जी श्रीवास्तव एवं कैप्टेन श्री मनु भल्ला ने संचार व्यवस्था में सुविधा पहुंचाकर, श्रीयुत अविनाश कुमार जी श्रीवास्तव तथा श्री मुकुलराज आदि महानुभावों ने सुन्दर एवं समय से छपाई एवं रूपसज्जा आदि में जो अमूल्य सहयोग प्रदान किया है निश्चय ही इसके बिना यह पुस्तक इस रूप में आपके सामने स्यात् ही आ सकती। एतदर्थ सभी महानुभाव हार्दिक साधुवाद के पात्र हैं। भगवान् आशुतोष इन सभी का कल्याण एवं दीर्घकाल तक लोककल्याण करने की इनको सभी को अमित शक्ति प्रदान करें।

"प्रमाण-सिद्धान्तविरुद्धमत्र
यत्किञ्चिदुक्तं मतिमान्द्य दोषात्।
मात्सर्यमुत्सार्य सदार्द्रचित्ताः
प्रमादमाधाय विशोधयन्तु॥"

वसन्त पंचमी
स० २०४१

विदुषांवशंवदः
शास्त्री श्रीनारायणः पाण्डेयः

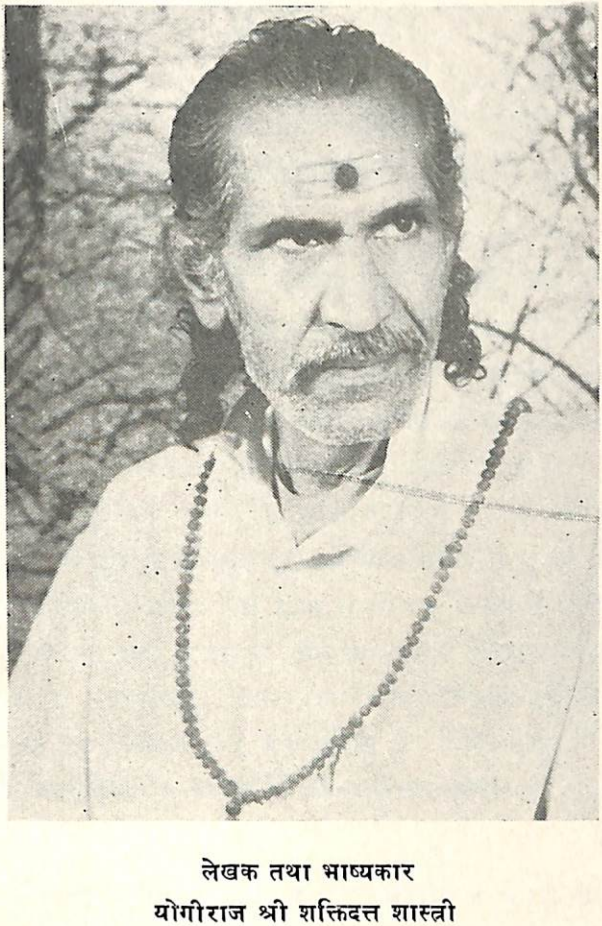

लेखक तथा भाष्यकार
योगीराज श्री शक्तिदत्त शास्त्री

प्राक्कथन

भारतीय तन्त्र दर्शन, वैदिक साहित्य के समकक्ष प्राचीन है एवं रहस्यपूर्ण साधना से परिपूर्ण सद्यः सिद्धिप्रद मन्त्र विज्ञान से ओतप्रोत दुर्लभ निधि है।

आज भारतीय जन मानस की प्राचीन तन्त्र ग्रन्थों के प्रति अनास्था के मूल कारण तीन ही हैं। बौद्ध युग में बौद्ध धर्माचार्यों ने बौद्ध साम्राज्य निर्माण करने के लिये भारतीय तन्त्रों का भयंकर दुरुपयोग किया। तन्त्र की सर्वोत्तम साधना वामाचार में वर्णित सांकेतिक तन्त्र शब्दों के प्रतीक शास्त्र सम्मत अर्थों को अल्पबुद्धि बौद्धाचार्यों ने [जो कि संस्कृत साहित्य के मूलाधार व्याकरण एवं शब्द संकेतार्थ सूचक हिरण्य-कोष, सरस्वती कोष, जैसे ज्ञान से वंचित, केवल सामान्य जन-साधारण में धर्म प्रचारक होने के कारण बौद्ध राजसत्ता के आश्रय से महापंडित, विद्याभास्कर जैसी स्वेच्छा उपाधि अपने नाम के साथ लगाने लगे थे] विकृत एवं वीभत्स रूप में प्रयोग करके भारतीय जन मानस में जो अनास्था उत्पन्न की यह–प्रथम कारण बना।

शकों, हूणों, तातार, मंगोल तथा मुगल लुटेरों के भारत पर सतत आक्रमण और आसुरी धर्म के मानने वाले क्रूर व्यभि-

चारी मानवता के हत्यारे स्वार्थी मुस्लिम शासकों द्वारा तक्ष-शिला, नालन्दा, देवगिरि, विजयनगर जैसे भारत के शिक्षा प्रतिष्ठानों एवं वहां सुरक्षित प्राचीन ग्रंथालयों को जलाने के भयंकर देश तथा समाजद्रोही कुकृत्यों द्वारा भी भारतीय तन्त्रों की प्राचीन पुस्तक नष्ट होने से जो अनास्था एवं उपेक्षा का वातावरण बना है–यह दूसरा कारण था।

अल्प शिक्षित संस्कृतज्ञों ने मुगल साम्राज्य के अन्तिम दिनों में और अंग्रेजी साम्राज्य के काल में तन्त्र के नाम पर विकृत बौद्ध तन्त्र ग्रन्थों की भूतादि साधना पद्धति को रूपान्तर कर, भारतीय साहित्य में वृद्धि कर वीभत्स एवं विकृत प्रथाओं का तन्त्र के नाम पर प्रचारण किया। अतएव विशुद्ध आगम-निगम नाम से प्रख्यात भारतीय तन्त्र साहित्य के प्रति जन-मानस में घृणा एवं उपेक्षा के भाव का प्रचार जो हुआ—यह तीसरा कारण बना।

तन्त्र की महिमा में कहा गया है—"वामो मार्गः परम गहनो योगिनामप्यगम्यः।" "जितेन्द्रियस्य सुलभो नान्यथानन्त जन्मभिः॥" अर्थात् वाममार्ग परम गम्भीर मार्ग है जोकि योगिजनों को भी अगम्य है, केवल जितेन्द्रिय साधकों, पवित्र जीवनचर्या वाले को ही सरल है, अन्यथा अनन्त जन्मों तक यथार्थ साधना की उपलब्धि नहीं होती। कहा है (चन्द्रमण्ड-लाद् स्रवते यद्बिन्दुः सा पान योग्या सुरा) अर्थात् ध्यानावस्था में सहस्रारस्थ चन्द्र नाड़ी समूह में सतत संकल्प शक्ति साधना से जो आभ्यांतरिक रस द्रवित होता है उसे विशिष्ट यौगिक

धारणा द्वारा शरीर के प्रत्येक स्नायु मण्डल में प्रसारित करना, यही सुरापान है जो योगी को धीर गम्भीर एवं प्राकृतिक शक्तियों पर विजय रूप सिद्धि प्रदान करता है।

"भोगनीया सुषुम्ना न तु मनुज रमणी—"अर्थात् सुषुम्ना नामके नाड़ी संस्थान में मन को एकाग्र करने पर जो अत्यद्भुत आनन्दानुभूति एवं परम संतुष्टि प्राप्त होती है वही तन्त्र साधकों की मैथुन क्रिया नाम से वर्णित है। ऐसे अनेक सूत्र वाक्यों से वाममार्ग सिद्धि हेतु पंचमकार सूत्र ही वामाचार में वर्णित हैं। इसी को स्पष्ट करने की सूचना है संकेत-विद्या गुरु वक्त्रगम्या अर्थात् तंत्र संकेतपूर्ण रहस्यमय विज्ञान है और कुशल जितेन्द्रिय योगीजनों के गुरुमुख से उसको श्रवण करने एवं गुरु सान्निध्य में ही साधना करने का आदेश है।

तंत्र शास्त्रों में वर्णित शक्तितत्व के विषय में आचार्य श्री क्षेमचन्द्रराज ने 'प्रत्यभिज्ञा शक्तिसूत्र' ग्रंथ में वर्णन किया है–

"चितिः स्वतंत्रा विश्व सिद्धि हेतुः" (पृष्ठ ३) अर्थात् जगत की उत्पत्ति, स्थिति, संहार, की सिद्धि चिति महाशक्ति द्वारा ही होती है। और वह स्वतन्त्र है। (भाष्यकार के दो शब्द) महाशक्ति के अनुग्रह और तिरोधान ये दो कृत्य तंत्रों में और भी माने गये हैं इसी लिये उसे पञ्चकृत्य कारिणी भी कहते हैं। अनुग्रह तिरोधान को बन्ध और मोक्षपद भी कहते हैं। समस्त सिद्धियों का आधार वह महाशक्ति ही है। सारा विश्व, शक्ति का ही परिणाम है, सब पदार्थ उसी से ही

विकसित हो रहे हैं। सबमें उसी की सत्ता है और सब वही है। वह वाममार्गीय तंत्रदर्शन का अन्तिम निर्णय है। इसी तत्व की साक्षत् अनुभूति के लिये अधिकारी भेद से, साधक की योग्यता के भेद से, महर्षियों ने साधना को पश्वाचार, वामाचार, कौलाचार, दिव्याचार, गन्धर्वाचार, नाम के पांच वर्गों में विभाजित किया है और दस महाविद्या नाम से शक्ति साधना की दस विधान-पद्धति, क्रिया-पद्धति का वर्णन किया है जो उत्तरोत्तर अति रहस्यपूर्ण एवं तत्काल सिद्धिप्रद हैं योगिजनों को।

तंत्र ग्रन्थों में वर्णित दस महाविद्याओं की कथाएं रूपकालंकार का आश्रय लेकर योगसिद्धि साधना की चरम सीमा एवं परिपूर्ण विज्ञानसम्मत योग विज्ञान, शरीर विज्ञान, प्रकृति विज्ञान की रहस्यात्मक साधन शैली का स्पष्ट दिग्दर्शन है साधकों के लिये।

तान्त्रिक योग शास्त्र में शरीर में तीन स्नायु केन्द्र ग्रंथियों का उल्लेख है–जिनको ध्यान धारणा द्वारा भेदन उत्क्रमण करने पर ही योगी को पूर्णता प्राप्त होती है जिन्हें ब्रह्मग्रंथि, विष्णुग्रंथि और रुद्रग्रंथि कहा गया है।

मूलाधार से ऊपर स्वाधिष्ठान में ब्रह्मग्रंथि स्थित है, मणिपूर मे विष्णुग्रंथि एवं आज्ञाचक्र में रुद्रग्रंथि है। ब्रह्म, विष्णु, रुद्र ग्रंथियों के भेदन होने पर भी साधक के अन्तर्गत अहंकार का पूर्ण रूपेण अभाव न होने से उसे पुनः संसार में आना पड़ता

है, क्षुद्र अहंता का विलय पराहंता में, रुद्रग्रंथि के भेदन पर ही होता है। महाशक्ति कुण्डलिनी चित्रा, वज्रा और ब्रह्म नाड़ी के साथ आज्ञा चक्र को भेदकर वज्रा नाड़ी में से प्रवाह करती है, तब जो अहंकार निवृति होती है उसे ही तंत्र में मुण्ड साधन (कपाल भेदन) कहा गया है। इसके पश्चात् ही शिव की समस्त सिद्धियां योगी को प्राप्त होती हैं और स्वार्थ के प्रधान मूल अहंकार का नाश होने से योगी द्वारा सिद्धियों का दुरुपयोग नहीं होता।

इस कठोर साधना क्रम में काम सबसे बड़ा अवरोधक है। योगियों को अनुभव होता है कि मणिपूर चक्र के नीचे की नाड़ियों में ही काम एवं रति का उद्गम केन्द्र है, उसी पर छिन्नमस्ता महाशक्ति आरूढ़ हैं। मणिपूरस्थ स्नायु मण्डल में शक्ति का अधोगामी प्रवाह ही रति और काम का अनर्थकारी उद्वेग प्रकट करता है जिसमें सारा संसार बहा जा रहा है। शक्ति का उपरोक्त प्रवाह उर्ध्वगामी होने पर ही रुद्रग्रन्थि का भेदन होता है। कुलाचार के पंचमकारों का यही रहस्य है। जितने सिद्ध योगी हुए हैं वह सब तंत्रोक्त कठोर साधना के दुर्गम पथ को पार करने पर पूर्णसिद्ध हुए हैं।

तैत्तिरीय उपनिषद् में इसी तंत्रोक्त साधन के संकेत वर्णन में 'व्यपोह्यशीर्ष कपाले'–सूत्र कहा है। कठोपनिषद् में "विद्यामेतांयोगविधिं च कृत्स्नम्" कहा गया है। इसी को नचिकेता ने यमराज से जानने का हठ किया था। तब यम ने कहा—
"शतं चैका-हृदयस्य नाड्यस्तासां मूर्धानमभि निःसृतैका ॥

तयोर्ध्वमापन्न मृतत्वमेति विश्वङन्या उत्क्रमणे भवन्ति ।" अर्थात् हृदय की एक शत नाड़ियों में एक नाड़ी मूर्धा को भेद-कर ब्रह्मलोक को गई है, उसी से उत्क्रमण होने पर मुक्ति होती है। उक्त संदर्भ तंत्रोक्त छिन्नमस्ता की साधना के वैदिक रूप हैं।

वामाचार तंत्रों का आधार पञ्चब्रह्म मंत्र हैं--जिनका उल्लेख कृष्ण यजुर्वेद की काष्ठा, तैत्तरीय, मैत्रायणी आदि शाखाओं में है, जिन्हें सद्योजात वामदेव अघोर तत्पुरुष तथा ईशान कहते हैं। भगवान् शिव के इन्हीं पांच मंत्रमय मुखों से शैव एवं शाक्तागमों का विस्तार हुआ जो परशुराम सूत्र में वर्णित है। भगवान सदाशिव ने वेद अष्टादश विद्या सर्वदर्शन लीला से बना कर संविन्मयी श्री जगदम्बा के पूछने पर अपने पञ्चमुखों से पंच आम्नाय वर्णन किये—इन्हीं पांच ब्रह्म मंत्रों की विस्तृत व्याख्या पाशुपतसूत्र पंचान्मायात्मक है जो शैव एवं शाक्तों को समान रूप से मान्य है और तंत्र साधना का वृहत् क्रियात्मक वर्णन है।

वैदिक उपासना पद्धति, निवृत्ति प्रधान एवं भक्ति प्रधान कही गई है, ताकि साधक अपने रुचि अनुसार अपने इष्टदेव स्वरूप का ध्यान करते हुए अपने प्रारब्धानुसार उपलब्ध जीवन को निर्वाह करता रहे।

तंत्र साधना कठोर श्रमपूर्ण स्वात्म पूजा एवं प्रवृत्ति-प्रधान प्राकृतिक शक्तियों को विजय करके, सुखोपभोग उपलब्धि करके स्वानन्दपूर्ण जीवन शैली की उपासना है जो साधक को

प्रत्येक क्षण सावधान एवं निर्भयतापूर्वक रहने की शिक्षा देती है और और आह्वान करती है (वीरभोग्या वसुन्धरा) यह पृथ्वी वीरों के भोग के लिए है। शाक्तो उठो--जीवन संघर्ष में अनुशासित ध्यान धारणा से प्रकृति के सूक्ष्म रहस्यों पर विजय प्राप्त कर देव दुर्लभ दिव्य भोगों को भोगते हुए शान्त, सुखी, निश्चिन्त, निर्भय जीवन व्यतीत करो। शिवोऽहम् भैरवोऽहम् की आन्तरिक निष्ठा आत्मगौरव के प्रतीक शाक्तों के लिये पृथ्वी में असम्भव शब्द ही नहीं है। ब्रह्माण्ड की समस्त शक्तियां, समस्त ऐश्वर्य तथा समस्त सिद्धियां कठोर-श्रमी शाक्त साधकों को सतत अभ्यास से प्राप्त होती हैं और मृत्युञ्जय उपासक शाक्त ही मृत्यु पर भी विजय प्राप्त करते हैं। अमृत के पुत्रो ! मृत्यु का भय माया है--तुम मायामयी के पुत्र हो तुम्हें भय कैसा ? दुःख कैसा ? दैन्य कैसा ? यही सारे भारतीय तंत्रों की सिंह-गर्जना है। तंत्र साहित्य में श्री गुरुपादुका (स्तवराज की महिमा अनुपम एवं यथार्थ है। मैंने अपने बाल्यकाल से सतत संघर्ष एवं कठोर श्रम द्वारा श्री गुरुपादुका) के सार्ध लक्ष पाठावृत्ति द्वारा जो अनिर्वचनीय प्रकृति साक्षात्कार एवं सूक्ष्म शिवनेत्र उद्बोधन शक्ति प्राप्त की--उस ध्यानातीत कालातीत दिव्य दर्शन शक्ति द्वारा, राष्ट्र-समाज-एवं साधक वर्ग के कल्याण और भारतीय समाज में व्याप्त दैन्य, अभाव, निराशा को नष्ट करके "शिवमस्तु सर्वजगतः परहित निरताः भवन्तु भूतगणाः" के ध्येय से कालान्तरवश लुप्त, कई सद्यः सिद्धिप्रद प्राचीन तंत्रोक्त स्तवों का पुनरुद्धार कर शाक्त समाज के श्रीचरणों में पुष्पाञ्जलि समर्पित करता हूं। शन्नो कौलिक :--

--श्री विद्येश्वर योगीराज श्री शक्तिदत्त शास्त्री

दो शब्द

ईस्वी सन् १९५० में पवित्र शैव धाम मानसरोवर तिब्बत में चार मास रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। वहां पर नियमित श्री शिव महिम्नस्तवराज का पाठ आरंभ करने पर मन में स्फुरणा हुई कि **(महिम्नो नापरा स्तुतिः)** कहा है। आचार्य श्री पुष्पदन्त ने यह क्यों कहा, और **(स्वर्ग मोक्षैक हेतुम)** कहकर इस स्तवराज की फलश्रुति वर्णन की है। क्या अर्थालङ्कार से ही ऐसा कहा है।

इसी शंका उहापोह में सहस्त्र पाठ इस स्तव के तंत्रोक्त सम्पुट विधान से करने पर ज्ञात हुआ तथा प्रत्यक्ष अनुभव हुआ कि इस स्तवराज में षड़ाम्नाय के सभी रहस्य, तथा सद्यः फलप्रद श्री विद्या एवं तंत्र शास्त्र की रहस्यमय साधना योगाचार, नीलाचार, कौलाचार, गन्धर्वाचार, का आनन्द रस भरा हुआ है।

पशु, वीर, और दिव्यवीर साधक श्री शिव महिम्न स्तवराज से तत्क्षण अभीप्सित फल, धर्म अर्थ काम के त्रिवर्ग की उपलब्धि कर सकते हैं।

शैवागम वर्णित महाभाव चिक्छक्ति क्रीडा और सूक्ष्म

जगत की रहस्य लीला का दिग्दर्शन भी इसके पठन से निश्चय ही होता है।

स्तवराज के मंत्र प्रयोग, साम्राज्याभिषिक्त कौल वीरों के लिये सहज हैं--वे, लय योग के भाव साम्राज्य में अहर्निश गतिशील शिव शक्त्यात्मक स्पन्दन लीला का इन चर्म चक्षुओं द्वारा साक्षात्कार प्राप्त कर कृतार्थ होंगे। सम्प्रति पशु भाव में रह रहे मानव भक्ति तत्व के अधिकारी होकर भगवान सदा-शिव के कृपा प्रसाद से जीवन को सुखमय अनुभव करेंगे। शिवमस्तु सर्वजगतः—**शिवशक्तिमयं जगत्—**

--श्री विद्येश्वर योगीराज श्री शक्तिदत्त शास्त्री
श्री मानसरोवर, तिब्बत।
२४ मई, १६५०

समर्पण

अनन्त श्री विभूषित सिद्ध, अमर योगी सद्गुरु श्री मुनीन्द्र हेड़ाखान बाबा की प्रेरणा से––धर्मशीला, पुण्यशीला, माँ भवानी की सर्वश्रेष्ठ उपासिका मेरी धर्म बहन श्री काश्मीर राज राजेश्वरी राजमाता श्री महारानी तारादेवी कटोच की सेवा में, यह श्री शिव महिम्न स्तवराज भाष्य पुष्पाञ्जलि सादर श्रद्धया समर्पित करता हूं।

जिनके वात्सल्यपूर्ण स्नेह एवं आर्थिक साहाय्य द्वारा यह अकिंचन चार मास निश्चिन्त होकर देवभूमि हिमालय की गोद में स्थित मानसरोवर तट पर रहकर भगवान सदाशिव पार्वती की दिव्य लीला का इन चर्म चक्षुओं द्वारा साक्षात् कर कृतार्थ हुआ।

––श्री विद्येश्वर योगीराज श्री शक्तिदत्त शास्त्री
कौल, वज्रयान, आचार्य
भारत

॥ श्री दिव्य सिद्ध मानव गुरुभ्योनमः॥

श्री पुष्पदन्त उवाच

बीजाक्षर 'म'; जप संख्या १०,०००; स्थान मूलाधार चक्र;

पूजा यन्त्र

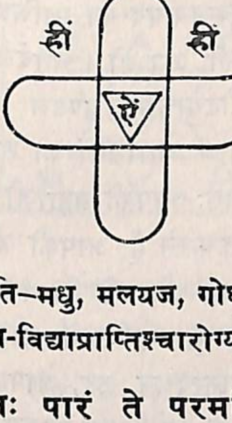

विशेषाहुति–मधु, मलयज, गोघृत, तण्डुल;

फलश्रुति-विद्याप्राप्तिश्चारोग्य प्राप्ति ।

ओऽम् ।। महिम्नः पारं ते परमविदुषो यद्यसदृशी ।
स्तुति ब्रह्मादीनामपि तदवसन्नास्त्वपि गिरः ।।
अथावाच्यः सर्वः स्वमतिपरिणामावधि गृणन् ।
ममाप्येषस्तोत्रे हर ! निरपवादः परिकरः ।। १ ।।ओऽम्।।

भावार्थ--हे हर महादेव, आपकी महिमा के पार को किंचत भी न जानते हुए हम अज्ञानियों द्वारा गायी हुई स्तुति यदि आपके आयोग्य होवे तो ब्रह्मादिकों की भी स्तुति, जो वे आपकी करते हैं वह निष्फल हो जायेगी। तथापि अपनी बुद्धि के अनुसार जो स्तोत्र मैं वर्णन करता हूं वह निरपवाद हो आपकी प्रसन्नता के लिये।

तत्वार्थ--आनन्दामृतप्रद चन्द्रकला को धारण करने वाले पिता शिव आपकी जय हो। **महि-मनः** पृथ्वी तत्वाधार चक्र में आपके षोडषभुजायुक्त रसराजेश्वर स्वरूप का अन्तर्यंजन करने वाले योगिजन पार्थिव जगत की मृत्युकला को विजय कर आपके मृत्युञ्जय पद का सान्निध्य प्राप्त कर जीवन-मुक्त हो जाते हैं, आपकी जय हो। चतुर्दलस्थ त्रिकोण यँत्र में आपके बालचन्द्र किरीटयुक्त मुखमण्डल की प्रभारश्मियों का निरन्तर चिन्तन असाध्य व्याधियों को शमन कर भक्तों की प्राणरक्षा करता है, अतः आपकी ब्रह्माजी महिम्नः हर आदि नामों से निरन्तर स्तुति करते हैं, आपकी जय हो। हे जगन्नाद-मूर्त्ते, आप ही सूक्ष्म नाद मात्रा से चिन्मय स्फूर्ति संकल्प द्वारा वैखरी स्वरूप में प्रकट हो शृष्टि में ज्ञान की वृद्धि करते हैं, आपकी जय हो। हे आनन्दघन रुद्र, आप आज्ञा चक्रस्थ मनस्तत्व में वाग्भव बीज के ज्योतिमय स्वरूप में स्थित हैं--लाक्षा-नीलवर्ण की आपके श्रीविग्रह से प्रसारित रश्मियाँ अल्पज्ञ साधकों को भी दिव्य प्रज्ञा तथा श्रुति रहस्य ज्ञान धारक बुद्धि कलाओं का विकास प्रदान कर, तत्वमसि का प्रत्यक्ष साक्षात्कार

कराकर "सद्गुरो प्रसादान्निमेषे सिद्धिः" इस सूत्र को सार्थक करती हैं। हे जगद्गुरो आपकी जय हो आपकी जय हो।

(उपरोक्त श्लोक में वाग्भव त्रिपुटाविद्या का मंत्रोद्धार निहित है। और षोडषकला ब्राह्मी शक्ति की बीजमाला का प्रस्तार चक्र भी मूलाधार में वज्रयान क्रम से पूजित होता है) महदाकाश तत्त्व के ज्योतिर्मय प्रकाश का आकर्षण कर पिण्डाकाश में विलीनीकरण की लययोग प्रक्रिया भी पुष्पदन्ताचार्य ने संकेत की है ॥ १ ॥

बीजाक्षर 'अ' ; जप संख्या १,००० स्थान; स्वाधिष्ठान चक्र;

पूजा यंत्र

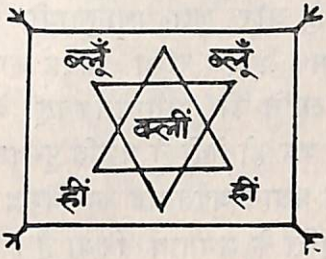

विशेषाहुति-रक्त चन्दन, दाणिम, पुष्प, त्रिमधु;
फलश्रुति-संतानप्राप्ति आकर्षण ।

अतीतः पन्थानं तव च महिमा वाङ्मनसयो ।
रतद्व्यावृत्यायं चकितमभिधत्ते श्रुतिरपि ॥
स कस्य स्तोतव्यः कतिविधगुणः कस्य विषयः ।
पदेत्ववर्वाचीने पतति न मनः कस्य न वचः ॥ २ ॥

भावार्थ——हे प्रभो आपकी महिमा का मार्ग वाणी और मन से परे हैं। जिसे वेद भी चकित होकर कहते हैं कि यह मार्ग अतद्व्यावृति करके भी प्राप्त नहीं किया जा सकता है। आपका सम्यक् स्तवन-सम्यक् गुण तथा प्राकृतिक विषयों के रहस्य सहित वर्णन किसकी वाणी कर सकती है? आप असीम अनन्त हैं।

तत्वार्थ—हे महेश्वर ! आप सनातन कुलपथ में ज्योतिर्मय स्वरूप से सतत विहार करते हैं आपकी जय हो। प्रभो आपकी सूक्ष्मातिसूक्ष्मरूपा महिमाशक्ति ही वाग्भव बीज की तन्मात्रा स्वरूप स्थिति में योगाचार के मर्मज्ञ साधकों को आभास होती है, और कुल पथानुयायी साधक मनश्चक्र में आपके महत्त्वात्मक प्रकाश रश्मि विग्रह का साक्षात्कार कर वेदान्त विज्ञान स्मृति को हस्तामलकवत् देखकर चकित रह जाते हैं आपकी जय हो वेदों ने प्रकृति पुरुषात्मक द्वैतवाद और अनुमान प्रमाण प्रधान अद्वैतवाद का विशद विवरण मानवों की तार्किक प्रवृत्ति के शमनार्थ किया है। किन्तु स्वाधिष्ठान् और मनश्चक्र में अन्तर्यागरत दिव्य वीराचारी साधक आपके अर्द्धनारीश्वर चिन्मय स्वरूप का दर्शन कर साश्चर्य स्तब्ध हो जाते हैं और प्रकृति के गुण विभेद तथा विषयों के असीम अनुलोभ विलोम तरंग प्रस्तार क्रम के रहस्य दर्शन द्वारा भ्रान्त हो (**स कस्य स्तोतव्यः**) वह किसके द्वारा स्तवनीय है ? और वह प्रकृति है अथवा पुरुप है ? यह निश्चय नहीं कर पाते—— आपकी जय हो। इस दिव्य पथ पर भाग्यशाली साधक वेदा-

तीत आपके ज्योतिर्मय वाङ्गमय दिव्य विग्रह का साक्षात्कार कर आपके श्रीपद पद्मों पर वाङ्गमनस् तत्त्वों की पुष्पञ्जलि अर्पित करते ही, वाणी मन से परे धर्ममेघ समाधि की आनन्द में जीवन को आप्लावित कर कृतकृत्य हो जाते हैं। आपकी जय हो ॥ २ ॥

(इस श्लोक में प्राणोत्कर्षण विद्या तथा नादकला का रहस्य साधन वर्णित है) ॥ २ ॥

बीजाक्षर 'म' ; जप संख्या ५,०००; स्थान त्रिवलया चक्र;

पूजा यंत्र

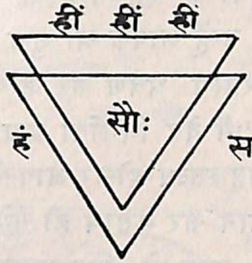

विशेषाहुति–नारिकेल, क्षीराज्य; फलश्रुति-योग सिद्धि, साक्षात्कार।

मधुस्फीता वाचः परमममृतं निर्मितवत स्तव।
ब्रह्मन् किं वागपि सुरगुरोर्विस्मय पदम् ॥
ममत्वेताँ वाणीं गुण कथन पुण्येनभवतः।
पुनामीत्यर्थेऽस्मिन् पुरमथन बुद्धि र्व्यवसिता ॥ ३ ॥

भावार्थ—हे भगवान् ! परम अमृत रूप मधु सदृश मीठी वेद वाणी रचते हुए श्री ब्रह्माजी की भी वाणी आपके विषय में विस्मय को प्राप्त हो तो हमारे सदृश अल्पज्ञों की बात ही क्या है ? तथापि हे त्रिपुरमथन रुद्र मैं तो आपके पवित्र करने वाले गुणों के कथन से अपनी बुद्धि को पवित्र करता हूं ऐसी मेरी निश्चित मति है ।

तत्वार्थ—हे देव गुरो शम्भो ! आपके अमृत रस पूर्ण शब्दों की मधुरता का पान करके ही ब्रह्माजी ने मधुवाक् ऋचा रूप वेदों का निर्माण किया है आपकी जय हो । मधुरस तथा रहस्यार्थ मिश्रित वेदों के स्तवन द्वारा ब्रह्माजी ने आपका साक्षाकार किया तो उन्हें आपके श्री मुख द्वारा अमृतेश्वरी श्री कुल कुण्डलिनी का रहस्य श्रवण कर अत्यद्भुत अपरा रहस्य का बोध हुआ और "मैं वेद निर्माता ब्रह्मा हूँ" यह विद्याज्ञान दम्भ नष्ट होने से वह स्तब्ध होकर आपकी लीला विहारच्छवि के सौन्दर्यामृत को पान कर कृतार्थ हो गये । आपकी जय हो । हे पिता योगेश्वर ! आप ही निश्चयात्मक बुद्धि के आधार महत्त्व के स्वरूप में सूक्ष्म रूप से व्याप्त हैं—हे वाग्भव मूर्ते ! आपके ही पुण्य बल से, आपकी परात्पर गुरुभाव स्थितिजन्य करुणाशक्ति के द्वारा मैं माया प्रकृति को प्रवृत्ति निवृत्ति कला सहित जानकर पुरमथन क्रिया रूप प्रपंच यज्ञ से पवित्र हो जाऊँ और मेरी वाणी पवित्र हो श्री कुल कुण्डलिनी साक्षात्कार द्वारा–और आपके श्रीपद पद्मों में निश्चयात्मक श्रद्धा बनी रहे यही मेरी वाक्यवन्दना है । आपकी जय हो । हे रस राज

राजेश्वर आनन्द भैरव ! षट्चक्र जैसे दुधर्ष रहस्यशक्तिपुञ्ज-पुरों को आपने स्वकीय संकल्प शक्ति द्वारा चूर्ण विचूर्ण कर संविद कलारूप अमृत का पान किया तो समस्त देववर्ग ने आपको त्रिपुर मथन विशेषण से सम्बोधित कर जो स्तवन किये वही कालान्तर में वेद नाम से जगत में प्रसिद्ध हुए हैं। आपकी जय हो। हे प्रभो आप मुझे भी स्ववरद हस्त से पावन करें ॥ ३ ॥

इस श्लोक में श्रुति वर्णित मधु विद्या और महा-वाग्भवकूट का सम्यक् मँत्रोद्धार वर्णित है तथा कुलाचार क्रम से त्रिवलया साधन भी ॥ ३ ॥

बीजाक्षर 'त'; जप संख्या २,०००; स्थान मणिपूर चक्र;
पूजा यँत्र

विशेषाहुति-तिल, यव, चावल, घृत;
फलश्रुति-लक्ष्मीसिद्धि ।

तवैश्वर्यं यत्तज्जग दुदयरक्षाप्रलयकृत् ।
त्रयी वस्तुव्यस्तं तिसृषु गुणाभिन्नासु तनुषु ।।
अभव्यानामस्मिन् वरद ! रमणीयाम रमणीं ।
विहन्तुं व्याक्रोशीं विदधत इहैके जड़धियः ।। ४ ।।

भावार्थ–हे वरद (स्वभक्तों को मन वांक्षित वर देने वाले) जो जगत् की उत्पत्ति रक्षा प्रलय करने वाले ऐश्वर्यं हैं–जो गुणों से भिन्न शरीरी ब्रह्मा विष्णु महेश इन तीनों देवों में माने गये हैं वस्तुतः वह आप ही हो ! आपका ऐश्वर्य ही वेदत्रयी में सारभूत है । है भगवन् ! कई जड़ बुद्धि वाले (मीमांसक) आपके ऐश्वर्य को सहन न करके आपकी निन्दा करते हैं । जो आपके इस अभव्य तथा रमणीय ऐश्वर्यं में रमण न कर सके वह दुर्बुद्धि मन्दमति है ।

तत्वार्थ–हे वरदायक प्रभो! आपकी दिव्य योग बिभूति के द्वारा ही इच्छा क्रिया ज्ञान काण्डात्मक वेदत्रयी का प्रादुर्भाव हुआ है । आपकी जय हो । हे देवेश्वर ! आपही नाद शक्ति द्वारा स्वाधिष्ठान चक्र में ब्रह्मास्वरूप से सृष्टि की उत्पत्ति करते हैं त्रिगुणात्मक पदार्थ सम्मिश्रण प्रक्रिया का विस्तार करके । आपकी जय हो । हे भगवन् ! मणिपूर चक्र में श्री हरिस्वरूप धारण कर अमृत, मणिर्मय दिग्दल पद्म में विहार करते हुए आपही जगत् की सुपुष्टि एवं रक्षा करते हुए स्वभक्तो को (**तनुषुभिन्ना तिसृषु गुणाः**) शरीर गुणाधीन होते हुए भी गुणों से परे है–ऐसा अद्वैत ज्ञान प्रदान करते हैं ।

आपकी जय हो। हे देवाधिदेव ! आपही त्रिवलया चक्रस्थ कालाग्नि रुद्र के रूप में कुण्डलिनी आरोह अवरोह गतिजन्य बीजाक्षराणु की विस्फोट रश्मि पुञ्जज्वालाओं से जगत् का संहार करते हैं। उस समय जड़ बुद्धि के साधक दम्भ मित्थ्या-भिमानवश तंत्रों की प्रतीक जड़ क्रियाओं में रमण करते हुए आपके संहारचक्र द्वारा संत्रस्त होकर चीत्कार करते हुए, आपको प्रलयङ्करभूतकर्मा, घोरदर्शन आदि अशोभनीय स्वरूप में आपकी मीमांसा करते हैं (क्योंकि वे नहीं जानते हैं कि बीजाणु विस्फोट क्रिया के बिना सृष्टि की उत्पत्ति रक्षासम्यक् रूप से नहीं हो सकती)। ऐसे अत्यभुतऽघोरकर्मा प्रभो ! आपकी ऐश्वर्यशक्ति की जय हो॥ ४ ॥

इस श्लोक में पाशुपत दर्शन तंत्र वर्णित बीजाक्षर प्रस्तार) का रहस्य तथा प्राण रश्मि निक्षेप विकिरण विज्ञान एवं पदार्थ महत्तत्वादि जात्यन्तर प्रक्रिया का यौगिक वर्णन निहित है। ऐश्वर्य शब्द से श्री पुष्पदन्ताचार्य ने योगैश्वर्य सूचक विभूति पाद की जटिल मीमांसा को बीजाक्षर साधन योग श्रेष्ठ साधक–वर्ग हेतु वर्णन किया है। और अष्टाक्षरी कामकल्प-लतेश्वरी तथा सप्तदशी अपरा विद्या का भी संकेत किया है) ॥ ४ ॥

बीजाक्षर 'कि'; जप संख्या २,०००; स्थान आज्ञा चक्र;
पूजा यँत्र

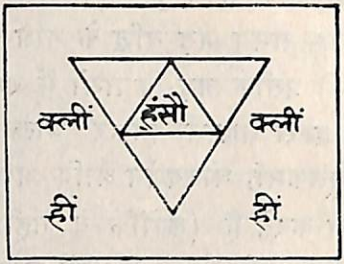

विशेषाहुति-दाड़िम, पुष्प, द्राक्षा विल्वपत्र, गोघृत;
फलश्रुति-तत्वदर्शन ।

किमीहः किंकायःस खलु किमुपाय स्त्रिभुवनं ।
किमाधारो धाता सृजति किमुपादान इति च ।।
अतर्क्यैश्वर्ये त्वय्यनवसरदुस्थो हतधियः ।
कुतर्कोऽयं कांश्चिन्मुखरयति मोहायजगतः ।। ५ ।।

भावार्थ–निश्चय करके विधाता जगत को रचता है। परन्तु कैसे रचता है क्या आधार हैं उसके ? और उपादान अर्थात् सामग्री क्या है ? हे भगवन् इस प्रकार जो सन्देह करते हैं वे कुतर्की हैं और मन्दमति वालों को ही ठगते हैं क्योंकि जगत् के मोह के लिये यह कुतर्क मात्र ही है। जो तर्क न किया जावे ऐसे ऐश्वर्यमय आपके गुणानुवाद के लिये ये तर्क मुझे भी वाचाल बना रहे हैं, अर्थात् इन तर्कों द्वारा मैं

सत्य का साक्षात्कार एवं जागतिक पदार्थ विज्ञान की मीमांसा में उद्यत हुआ हूं।

तत्वार्थ–हे जगत्गुरो। दृश्य जगत् के प्रपंचों द्वारा ग्रस्त चित्त में ही अनिश्चयात्मक वृत्ति तरंङ्गों की बहिर्मुखी धाराएं सतत प्रवाहित होती हैं–और नाना प्रकार के भ्रमात्मक कुतर्कों का आभास होता है और इस भयावह स्थिति में सामान्य जन उन्मत्त हो जाते हैं। अत्यद्भुत जटिल जगन्नाट्यकारी महेश्वर! आपकी विश्व सम्मोहन कला की जय हो। यह जगत् क्या है ? और जगत् के पाञ्च भौतिक तत्वों का आधार क्या है ? यह जब तक आपके प्रासाद बीज का साक्षात्कार योगी को नहीं होता तभी तक मनस्तत्व में निश्चय बोध तत्व ज्ञान का सम्यक् स्फुरण नहीं होता। पंच तन्मात्रा कला की प्रस्तार पंचावृत्ति द्वारा ही जगत् पितामह ब्रह्मा ने आपके पंचानन स्वरूप का साक्षात्कार कर सृष्टि सृजन में सिद्धि प्राप्त की और पंच-कोषात्मक कायव्यूह निर्माण में सफल हुए। आपकी योगैश्वर्य शक्ति की जय हो ॥ ५ ॥

आचार्य श्री ने इस श्लोक में प्रसादेश्वर मंत्र का प्रस्तार रहस्य और सूक्ष्म लय योग का संकेत करते हुए पञ्च तत्त्वों के स्थूल और सूक्ष्म पञ्च तन्मात्राओं का साधिकार वर्णन पांच बार किम् शब्द का प्रयोग कर प्रदर्शित किया है। श्रेष्ठ साधकों के लिये त्रिभुवन वाक्य सम्बोधन द्वारा पञ्चदशी कामकूट विद्या का भी मंत्रोद्धार और काम कला का भी सूक्ष्म

ध्यान संकेत इसमें निहित है जो अनन्यभावसिद्ध श्रेष्ठ साधक श्री सद्‌गुरु कृपा द्वारा अनुभव कर सकते हैं ।। ५ ।।

बीजाक्षर; 'अ'; जप संख्या १०००; स्थान हृद् चक्र;

पूजा यंत्र

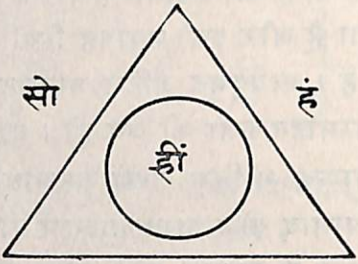

वशेषाहुति–पद्म, पुष्प; मध्वाज्यचन्दन;

फलश्रुति–सर्वार्थसिद्धि, स्त्रीप्राप्ति ।

अजन्मानो लोकाः किमवयववन्तोऽपिजगता-
मधिष्ठातारं किं भवविधि रनादृत्य भवति ।।
अनीशो वा कुर्याद् भुवन जनने कः परिकरो ।
यतो मन्दास्त्वां प्रत्यमरवर संशेरत इमे ।। ६ ।।

भावार्थ—हे प्रभो इस लोक के देहधारी क्या अजन्मा हैं ? जगत् की रचना क्या रचयिता की उपेक्षा से हुई है? और विधाता यदि समर्थ न हो तो क्या होगा? इस जगत् के रचने में रचयिता के पास कौन से साधन हैं ? मन्द बुद्धि वाले आपके विषय में

जो इस प्रकार का सन्देह करते हैं वह व्यर्थ है। हे अमृतमय देवश्रेष्ठ मुझे तो आपके विषय में कुछ सन्देह ही नहीं है।

तत्वार्थ—हे योगेश्वर ! इस नाशमान् जगत् के अवयव क्या हैं ? यह आपकी कृपा के बिना नहीं ज्ञात होता। आपके शरणागत जो भक्त हैं उन्हें ही मन बुद्धि चित्त अहंकार महत्तत्व रूप अवयव ही इस जगत् के आधार हैं ऐसी–प्रत्यक्षानुभूति ज्ञान होता है। आपकी जय हो। यह दृश्य जगत् और सृष्टि के आधार तत्व अनादि और स्वयम्भू हैं अतः लोकों को। स्वर्ग-ब्रह्मलोकादि क्षेत्रों को अजन्मा कहा गया है अर्थात् प्राकृतिक नित्य परिवर्तन प्रक्रिया के प्रभाव उपरोक्त लोकों पर नहीं होते हैं। हे आनन्दघन ! आपकी माया शक्ति निश्चित गति और सिद्धान्तों द्वारा निरन्तर भुवनों के सृजन में सचेष्ट तथा जाग्रत रहती है। आपकी जय हो। हे देवेश ! आपकी अधिष्ठान चक्र में धारणा करने वाले योगीजन क्रमशः शून्यवाद का सम्यक् अनुभव कर आपके वरदायक अमृतपूर्ण मृत्युञ्जयपद को प्राप्त कर सभी सिद्धियों के अधिकारी बन निश्शंक निर्भय होकर प्रापञ्चिक जगत् का विस्तार एवं निर्माण करने में समर्थ होते हैं। आपकी जय हो ।। ६ ।।

इस श्लोक में आचार्य श्री भुवनेश्वरी विद्या का सावरण अन्तर्याग और तत्त्व पञ्जीकरण तंत्र ध्यान संकेत तथा पश्चिमाम्नाय अन्तर्योग चक्र जाप का दिग्दर्शन किया है ।। ७ ।।

बीजाक्षर 'व्र'; जप संख्या २०००; स्थान कुण्डलिनी चक्र;
पूजा यंत्र

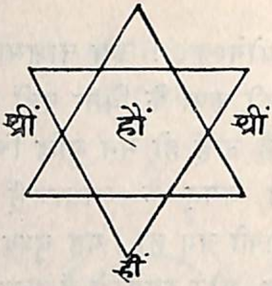

विशेषाहुति-क्षीराज्य, पद्म बीज; फलश्रुति-दिव्यदृष्टि प्राप्ति,
देव साक्षात्कार।

त्रयी साख्यं योगः पशुपतिमतं वैष्णवमिति ।
प्रभिन्ने प्रस्थाने परमिदमदः पत्थ्यमितिच ।।
रुचीनां वैचित्र्याद् ऋजुकुटिल नानापथ जुषाम् ।
नृणामेकोगम्य स्त्वमसि पयसामर्णवमिव ।।७।।

भावार्थ—हे भगवन् ! देवत्रयी-सांख्यत्रयी-योग शैवमत, वैष्णव मत आदि भिन्न-भिन्न मत होने से उन मतों के विषय में कोई वैष्णव मत और कोई शैव मत को अच्छा कहते हैं। रुचि की विचित्रता से टेढ़े मार्ग में प्रवृत्त हुए मनुष्यों को अन्त में एक आप ही ऐसे प्राप्त होते हो—जैसे नदियां टेढ़ी-सीधी बहती हुई सीधे समुद्र में ही मिलती हैं।

तत्वार्थ—हे श्री कामेश्वर देव ! आपही प्रसादेश्वर मंत्रराज की चैतन्य-सत्ता हो-भक्तजनों के कल्याण हेतु आपही

कुल कुण्डलिनी के त्रिवलयमय ज्योतिस्वरूप से नादतत्व का आधार लेकर वेदत्रयी नाम से सृष्टि में ऋषिजनों से सुपूजित हो स्वभक्तों को धर्म अर्थ काम मौक्ष ऐश्वर्य प्रदान करते हैं। आपकी जय हो।

हे आनन्दघन नीलकण्ठ ! शून्यवाद के आधार सांख्यदर्शन के अनुयायी भी आपके स्थूल रूप भाव के उपासक हैं क्योंकि वे चतुर्विशंति तत्त्वात्मक आपके प्राकृत स्वरूप को ही सृष्टि का रचयिता मानते हैं—और उनकी इस मान्यता में **अणो रणीयान् महतो महीयान्** सूत्र भी समर्थन देता है और आपकी स्थूलतम प्रधान वृत्ति से मोहित वे सांख्यवादी (**प्रभिन्ने**) प्र-प्रकृति के–भिन्ने विभिन्न भेदों के अन्वेषण में दीर्घातिदीर्घकाल पर्यन्त परिश्रम कर श्रान्त हो जाते हैं तो आप सहसा दयाद्र होकर उन्हें तत्वमसि का बोध ज्ञान प्रदान कर उन्हें जीवनमुक्त कर कृतार्थ करते हैं। आपकी जय हो।

हे सिद्धिदाता पिता ! दिव्य वीर भावोपासक ही आपकी लीला बिहारच्छवि को वास्तविक स्वरूप से देखने का सौभाग्य प्राप्त कर जीवन मुक्तावस्था के आनन्द भाव में स्थित हो प्रकृति प्रपंचपूर्ण गतिविधि को अत्यद्भुद षट् चक्रों में में निरन्तर सक्रिय एवं सृष्टि स्थिति संहार कारकावस्था में यथार्थ एवं सुस्पष्ट देखते हैं–आपकी जय हो। इसी अत्यानन्दप्रद दृश्य का वर्णन श्री पुष्पदन्त ने **प्रस्थाने परमिद** शब्द में वर्णन किया है एवं लय योग की परमोच्च साधना का भी संकेत किया है। यथा ऋृजु-कुटिल-नाना-पथ-जुषाम् वाक्य चक्रस्थ

मार्ग की प्रतिदुरूहता का उद्बोधन कराता है । हे भूतेश्वर भैरव । आपकी स्थूल द्रव्यादि एवं विधि प्रधानता (चाहे वह सौम्य विधि हो अथवा क्रूर आसुरी विधि हो) ये यजन करने वाले भक्त शीघ्र ही ऐश्वर्य लाभ कर नाना प्रकार के भोगों का उपभोग करते हैं और भोगासक्तिवश बारम्बार जन्म मरण रूपी आपके मोहपाश में आबद्ध रह आपके पशुपति नाम को सार्थक करते हैं–आपकी योगमाया की जय हो। हे वैष्णव शिरोमणे महेश्वर ! शुद्ध वैष्णवाचार से जो भक्तजन आप का यजन करते हैं–नारदीय पञ्चरात्र पद्धति से तांत्रिक प्रतिष्ठा कर आपकी तथा श्री विष्णु की द्वैधभावरहित हरि-हरात्मक स्वरूप का अन्तर्याग करते हैं–वे सभी साधक इस जगत् के भोगों का उपभोग करते हुए विशुद्धाद्वैतवाद भक्ति रस में प्रवाहित होते हुए ज्ञानामृत सागर में लीन हो जाते हैं–आपकी महिमा शक्ति की जय हो ।। ७ ।।

इस साधन में रत साधकों को आचार्य श्री ने पत्थ्य शब्द से निर्देशित किया है–क्योंकि रोगी के लिये जैसे पत्थ्या-पत्थ्य विचार है वैसे ही वैष्णव भावोपासना भी विधि निषेध-परक है। इस श्लोक में महाकामदुधाम्बा क्षरीविद्या और श्री त्रिपुटा विद्या का भी मंत्रोंद्वार है । अतएव भोग-योग-प्रद साधना एवं उर्ध्वाम्नाय तथा पूर्वाम्नाय की उपरोक्त दोनों सिद्ध विद्याओं का संकेत आचार्य पुष्पदन्त ने किया है ।। ७ ।।

बीजाक्षर 'म'; जप संख्या ५,०००; स्थान मणिपूर ;

पूजा यंत्र

विशेषाहुतिति-नीलपद्म, मृगमदाज्य; फलश्रुति–लक्ष्मीसिद्धि, देवत्व प्राप्ति ।

महोक्षः खट्वांङ्गः परशुरजिनं भस्म फणिनः ।
कपालं चेतीयत्तव वरद तंत्रोपकरणम् ।।
सुरास्तांतामृद्धि विदधति भवद् भ्रूप्रणिहितां ।
नहि स्वात्मारामं विषयमृगतृष्णा भ्रमयति ।। ८ ।।

भावार्थ—पञ्नानन भगवन् ! बृद्धबैल, खाट का पाया फरसा, गजचर्म, भस्म, सर्प, तथा कपाल आदि आपकी विभूति है। हे वर देने वाले शिवजी आपकी कृपा दृष्टि से देवता लोग जो दिव्य भोगों की भोगते हैं उनका आप भी क्यों नहीं भोग करते ? ऐसी ऋषि जनों की शंका है और इसका उत्तर यही है कि स्वात्माराम याने आत्मनिष्ठ योगीजनों को विषय तृष्णा नहीं भ्रमित कर सकती है। आपकी जय हो।

तत्वार्थ–हे योगेश्वर प्रभु ! आप विशाल नेत्र नन्दी-वाहन की पीठ पर आरूढ हैं । आपकी जय हो । हे आनन्दमूर्ते, आप खाट का पाया, फरशा, गजचर्म, चिताभस्म और सर्प, यज्ञोपवीत तथा कपाल आदि तंत्र उपकरण जग-कल्याण के लिये ही धारण किये हुए हैं । आपके इस अत्यद्भुत अघोरेश्वर रूप का ध्यान करते हुए **कपालं** अर्थात् सहस्त्रार में जो अन्तर्याग करते हैं वे भक्त निश्चय करके आपके कृपा-प्रसाद से ऋद्धि रूप अक्षय अखण्ड ऐश्वर्य का देवताओं की तरह भोग करते हैं । आपकी जय हो । हे वरदायक पिता ! आपके भृकुटि निक्षेप मात्र से भक्त को देव दुर्लभ भोगों की प्राप्ति के साथ स्वरूप-बोधजन्य शांति की उपलब्धि होती है । अन्यथा योग प्रवीण जन भी आपकी कृपा से रहित होने पर विषय प्रधान मृग तृष्णा से ग्रस्त हो स्वर्ग मृत्यु लोक में ही भ्रमण करता रह जाता है । आपकी करुणा शक्ति की जय हो । सद्गुरो रुद्र ! अपने श्रद्धा और तप के अहंकार को जिसने दृढ़ निष्टा रूप फरशे से काट डाला है **(विषय फणिनः)** विषय रूप सर्प को भस्म कर दिया है, आपकी वरद मुद्रा से सतत ध्यान द्वारा ऐसे भक्त को आपकी कृपा कटाक्ष लालसावश देवगण ऋद्धि पदार्थों द्वारा सन्तुष्ट करने की चेष्ठा करते हैं–और ऐसा महाभाग्य साधक इस लोक में श्रेष्ठ भोगों का उपभोग करते हुए भी जीवन मुक्तावस्था को प्राप्त करता है–और आपकी कृपा दृष्टि से **(भ्रमयति)** मूलाधार से सहस्त्रार पर्यन्त जो व्यापक कुलपथ है उसमें विहार करता है । ऐसे परमोन्मत्त कौलावधूत को ईर्ष्यावश देवगण पूछते हैं **(कपालं)** कौन

प्रतिपालन करता है ? तो वह उत्तर देता है (**तव वरद**) तुम्हें वर देने वाले सदाशिव-ऐसी अद्भुत लीला करने वाले कैलाशपति आपकी जय हो ॥ ८ ॥

इस श्लोक में श्री पुष्पदन्त ने महामन्मथकूट श्री विद्या का वर्णन किया है और दिव्य भाव लीला के मणिद्वीप लीला का संकेत भी यथा—**मणिनः** और कुलपथगा कुण्डलिनी का सहस्रार आरोह-अवरोह वर्णन है **फणिनः कपालं** शब्द से ॥ ८ ॥

बीजाक्षर 'ध्रु'; जप संख्या १,०००; स्थान आज्ञा चक्र;
पूजा यँत्र

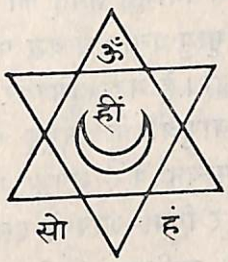

विशेषाहुति-श्वेततिल, त्रिमधु; फलश्रुति-प्रातिभ ज्योति-दर्शन, मँत्र सिद्धि ।

ध्रुवं कश्चित् सर्वं सकलमपरस्त्वध्रुवमिदम् ।
परो ध्रौव्याध्रौव्ये जगति गदति व्यस्तविषये ॥
समस्तेऽप्येतस्मि पुरमथन ! तैर्विस्मित इव ।
स्तुवन् जिह्वेमि त्वां न खलु ननुधृष्टा मुखरता ॥ ९ ॥

भावार्थ–हे भगवन् ! कोई इस जगत् को ध्रुव **नित्य** कहते हैं–कोई अध्रुव अनित्य कहते हैं। ऐसे विपरीत विचारों वाले उन अनेक मत वादियों से विस्मित हुआ मैं आपकी स्तुति करने में लजाता हूं और हे पुरारि ! उन्हीं बातों से मैं आश्चर्यित हुआ हूं, यह वाचालता मुझको प्रेरणा नहीं करती है।

तत्वार्थ—हे पुरारि ! विषयों में व्यस्त जीवों को यह जगत् अनित्य ज्ञात होता है–क्योंकि वे भौतिक उपादान तत्व जो आपकी स्थूल प्रकृति से प्रादुर्भूत एवं परिवर्तनशील ज्ञात होते हैं-उसे ही जगत मान बैठे हैं और स्थूल प्रकृति के पाञ्चभौतिक स्वरूप के द्वारा निर्मित जगत् की वृद्धि-ह्रास से अशान्त हो बारम्वार जन्म के मृत्यु बन्धन में बद्ध पशु की तरह नियंत्रित रहते हैं–आपकी जय हो। हे महाकामेश्वर देव ! आपने अनित्य (परिवर्तनशील) तत्वाणुओं के समूह को रश्मिमिश्रण रूप यौगिक प्रक्रिया से मन्थन कर अपरा कलाशक्ति द्वारा ध्रुव जगत् का निर्माण कर दिया–आपकी इस चक्र वेध रूप लीला को देखकर देव दैत्य ऋषिगण विस्मित होकर आपकी जय-जयकार कर रहे हैं। सृष्टि चक्र की ध्रुव स्थिति में प्रधान कारण, आपकी अण्वाणुभेदन (पुरमथन) कार्यकुशलता देख कर ही अखिल ब्रह्माण्ड के जड़-चैतन्यों (मानव-देवों) ने आपकी महेश्वर सम्बोधन कर देवाधिदेव परब्रह्म नाम से प्रतिष्ठा की है-और वेद आगम-निगम भी आपका बारम्बार स्तवन करते हैं। आपकी जय हो। हे प्रभो ! जगत् के कल्याण हेतु और कुलपथानुयायी भक्तों के कल्याणार्थ आपने महाकामदुधाम्बा स्वरूपा

श्री विद्या के मन्मथ कूट को प्रकट कर **भगवान् भक्त वत्सलः** नाम को सार्थक किया है। आपकी जय हो ॥९॥

इस श्लोक में आचार्य श्री ने श्री विद्या का मँत्रोद्धार और प्रकृति-तत्वों की कलाओं का दिग्दर्शन तथा भूतत्वादि पुञ्जीकरण प्रक्रिया का साधन संकेत तत्त्वदर्शी श्रेष्ठ साधकों के आनन्दार्थ निरूपित किया है। मेरे स्वानुभव से इस श्लोक में मन्मथ कूट कला साधन और लययोग के भू तत्त्वादि सम्मिश्रण विषयक योगाचार ध्यान संकेत हैं ॥ ९ ॥

बीजाक्षर 'त'; जप संख्या ५००० ; जपस्थान स्वाधिष्ठान;
पूजा यँत्र

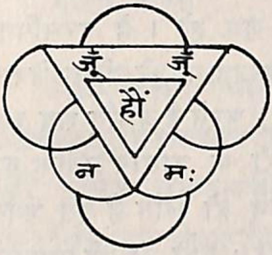

विशेषाहुति-दाड़िम, पुष्प, पद्म, पुष्प मध्वाज्य, वारुणी;
फलश्रुति-सन्तानप्राप्ति, स्वास्थ्य लाभः ।

तवैश्वर्यं यत्नाद्यदुपरि च विरञ्चिर्हरिरधः ।
परिच्छेत्तुं यातावनलमनिल स्कंध वपुषः ॥
ततो भक्ति श्रद्धाभर गुरुगृणद्भ्यां गिरिशयत् ।
स्वयं तस्थे ताभ्यां तव किमनुवृत्तिर्न फलति ॥ १० ॥

भावार्थ––हे भगवन्, ऊपर में ब्रह्मा और नीचे के भाग में विष्णु यह दोनों देव आपके ऐश्वर्य को ठहराने लगे, किन्तु वे असमर्थ हुए तब आपने उसे स्वयं धारण किया। पुनः श्रद्धाभक्ति से स्तवन करने पर इन दोनों को आपने प्रत्यक्ष दर्शन दिया–आपकी सेवा क्या नहीं फलती ! सब तरह से फलती है।

तत्वार्थ–हे गिरीश ! जो योगीजन सतत् अभ्यास के द्वारा स्वर रूपी ब्रह्मा तथा गति रूपी विष्णु को कुलपथ मार्ग से सहस्रार पर्यन्त आरोह-अवरोह योग में भक्ति श्रद्धापूवर्क नियोजित करते हैं–आपके श्रीपद पद्मों का आज्ञाचक्र में परात्पर गुरु पादुका भाव से स्तवन करते हुए वे महा भाग्यशाली साधक आपके अनुग्रह प्रसाद से दिव्यैश्वर्य को प्राप्त करते हैं–आपकी जय हो। हे परमपिता ! जो श्रेष्ठ योगि आपके पाशुपत सम्प्रदाय की दीक्षा लेकर स्वयं को (**तत्-वहां, स्थः –स्थितीकरण**) करते हैं अर्थात् **शव रूप महादेव हृदयोंपरिसंस्थिता** परमेश्वरी के आधार प्रतीक रूप से ध्यानयोग करते हैं–वे आप में लीन हो जाते हैं इस जगत् के ऐश्वर्यादि भोगों को यथेच्छ भोगकर। इसी को श्री पुष्पदन्त ने (**किम् अनुवृत्तिर्न फलति**) अर्थात् कौन सा ऐसा फल है जो आपकी उपासना से न प्राप्त हो, भक्त को सब कुछ प्राप्त हो जाता है, और (**किम् न फलति अनुवृत्तिः**) अर्थात् क्या नहीं फलता ? **अनुवृत्तिः** अर्थात् आवागमन ॥१०॥

इस श्लोक में श्रीछिन्नमस्ता की साधना एवं तज्जन्य फलश्रुति का वर्णन और चक्र वेधान्तर्गत हरिहरात्मक प्रसाद

कूट मंत्र का संकेत भी दिग्दर्शित किया गया है ।। १० ।।

बीजाक्षर 'अ'; जप संख्या १०००; स्थान सहस्रार चक्र;
पूजा यँत्र

विशेषाहुति-पद्म, त्रिमधु, द्राक्षा ; फलश्रुतितत्त्वसिद्धि,
ईशत्व प्राप्ति ;

अयत्नादासाद्य त्रिभुवनमवैरिव्यतिकरम् ।
दशास्यो यद्बाहूनभृतरणकण्डूपरवशान् ।।
शिरः पद्म श्रेणी रचित चरणाम्भोरुहबलेः ।
स्थिराया स्त्वद्भक्तेस्त्रिपुरहर विस्फूर्जितमिदम् ।। ११ ।।

भावार्थ—त्रिपुरेश्वर शिव ! जिस रावण ने वैरीरहित तीनों लोकों का राज्य बिना श्रम के ही प्राप्त किया, और जिसकी भुजाएं सदा ही समर के लिये उत्कण्ठित रहती थीं, जिसने अपने मस्तक रूपी कमलों को वलय अर्थात् हार बनाकर आपके चरणकमलों में समर्पित किया था—वह आपकी स्थिर-भक्ति का प्रतीक मात्र था । हे महामहिम ! आपको मैं प्रणाम

करता हूं । आप ब्रह्माण्डस्थ स्वभक्तों का कल्याण करें ।

तत्वार्थ—हे त्रिपुरहर महादेव ! आपके श्री चरणकमलों का पूजन करने वाले शैव त्रिभुवन में अपराजित हो विहार करते हैं विना विशेष श्रम के । संकल्प वल द्वारा धारणात्मक उत्तराम्नाय क्रम से महाकापालिक श्रेष्ठ रावण ने आपके श्री वज्रेश्वरी अघोरानन्दनाथात्मक ज्योतिर्मय स्वरुप का अन्तर्याग यजन एवं पुष्पाञ्जलि के हेतु सहस्रारस्थ पद्ममुण्ड करो अर्पित कर श्री विद्येश्वर पद तथा देव दुर्लभ सिद्धैश्वर्य प्राप्त कर स्वर्गादि लोकों पर भी विजय प्राप्त की । हे योगेश्वर ! आपके अनन्त अत्यद्भुत योग वीराचार के सम्यक् साधन के अल्पांश ने रावण को विश्वजयी देव विजयी बनाया । आपकी दिव्य शक्ति की जय हो ।। ११ ।।

इस श्लोक में आचार्य श्री ने चक्र भेदन याग और प्राणोत्कर्षिणी विद्या के अत्युच्च दिव्य वीरभाव सिद्धि प्रयोग तथा दिग्दस्थ श्री छिन्नमस्ता का संहार क्रम यजन अमृतेश्वरी कल्पराज मँत्रोद्धार के सहित कथन किया है । और एक इसी श्लोक के प्रयोग का यथार्थ ज्ञान होने पर साधक तत्वलयीकरण कर ब्रह्माण्ड मण्डल को क्षुब्ध और छिन्नभिन्नकर अपराजितत्व को प्राप्त करने में समर्थ होता है । वारुणीय अमृतमातृका-शक्तित्रय कूट-श्री वज्रा मूल बीज मंत्रोद्धार तथा अघोर चक्र की वर्ण माला मँत्र का भी विस्तृतन्यास रहस्य श्री पुष्पदन्ताचार्य ने कहा है ।। ११ ।।

बीजाक्षर 'अ'; जप संख्या ३०००; स्थान स्वाधिष्ठान;

पूजा यंत्र

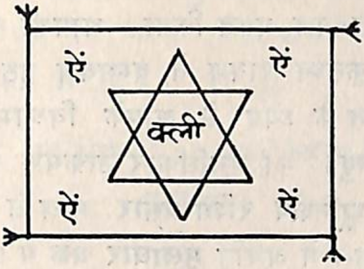

विशेषाहुति—तिल, चन्दनाज्य, शर्करा, नारिकेल;

फलश्रुति-भूतजय।

अमुष्य त्वत्सेवा समधिगतसारं भुजवनं।
बलात् कैलाशेऽपि त्वदधि वसतौ विक्रमयतः॥
अलभ्या पातालेऽप्यलसचलिताङ्गुष्ठ शिरसि।
प्रतिष्ठात्वय्यासीद् ध्रुवमुपचितो मुह्यतिखलः ॥१२॥

भावार्थ—हे महेश्वर ! आपके श्री चरणकमलों की सेवा के द्वारा रावण ने सुदूर पाताल में भी विजय प्राप्त की थी आपसे वल प्राप्त करके—आपकी जय हो। आपके द्वारा प्राप्त भुजवल से उन्मत्त हो दशानन ने जब आपके निवास-स्थान कैलाश पर्वत को उखाड़ना चाहा तो आपके पैर के अंगूठे से दबाते ही वह कैलाश पर्वत सहित जड़ स्तब्ध होकर फंस गया, आपकी अलौकिक महिमा शक्ति की जय हो।

करता हूं । आप ब्रह्माण्डस्थ स्वभक्तों का कल्याण करें ।

तत्वार्थ—हे त्रिपुरहर महादेव ! आपके श्री चरणकमलों का पूजन करने वाले शैव त्रिभुवन में अपराजित हो विहार करते हैं विना विशेष श्रम के । संकल्प वल द्वारा धारणात्मक उत्तराम्नाय क्रम से महाकापालिक श्रेष्ठ रावण ने आपके श्री वज्रेश्वरी अघोरानन्दनाथात्मक ज्योतिर्मय स्वरुप का अन्तर्याग यजन एवं पुष्पाञ्जलि के हेतु सहस्रारस्थ पद्ममुण्ड करो अर्पित कर श्री विद्येश्वर पद तथा देव दुर्लभ सिद्धैश्वर्य प्राप्त कर स्वर्गादि लोकों पर भी विजय प्राप्त की । हे योगेश्वर ! आपके अनन्त अत्यद्भुत योग वीराचार के सम्यक् साधन के अल्पांश ने रावण को विश्वजयी देव विजयी बनाया । आपकी दिव्य शक्ति की जय हो ।। ११ ।।

इस श्लोक में आचार्य श्री ने चक्र भेदन याग और प्राणोत्कर्षिणी विद्या के अत्युच्च दिव्य वीरभाव सिद्धि प्रयोग तथा दिग्दस्थ श्री छिन्नमस्ता का संहार क्रम यजन अमृतेश्वरी कल्पराज मँत्रोद्धार के सहित कथन किया है । और एक इसी श्लोक के प्रयोग का यथार्थ ज्ञान होने पर साधक तत्वलयीकरण कर ब्रह्माण्ड मण्डल को क्षुब्ध और छिन्नभिन्नकर अपराजितत्व को प्राप्त करने में समर्थ होता हैं । वारुणीय अमृतमातृका-शक्तित्रय कूट-श्री वज्रा मूल बीज मंत्रोद्धार तथा अघोर चक्र की वर्ण माला मँत्र का भी विस्तृतन्यास रहस्य श्री पुष्पदन्ताचार्य ने कहा है ।। ११ ।।

बीजाक्षर 'अ'; जप संख्या ३०००; स्थान स्वाधिष्ठान;

पूजा यंत्र

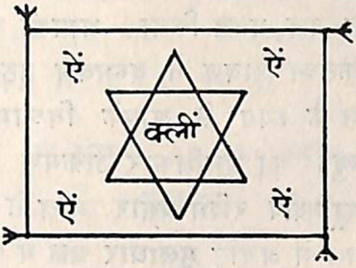

विशेषाहुति—तिल, चन्दनाज्य, शर्करा, नारिकेल;

फलश्रुति-भूतजय ।

अमुष्य त्वत्सेवा समधिगतसारं भुजवनं ।
बलात् कैलाशेऽपि त्वदधि वसतौ विक्रमयतः ॥
अलभ्या पातालेऽप्यलसचलिताङ्गुष्ठ शिरसि ।
प्रतिष्ठात्वय्यासीद् ध्रुवमुपचितो मुह्यतिखलः ॥१२॥

भावार्थ—हे महेश्वर ! आपके श्री चरणकमलों की सेवा के द्वारा रावण ने सुदूर पाताल में भी विजय प्राप्त की थी आपसे बल प्राप्त करके—आपकी जय हो । आपके द्वारा प्राप्त भुजबल से उन्मत्त हो दशानन ने जब आपके निवास-स्थान कैलाश पर्वत को उखाड़ना चाहा तो आपके पैर के अंगूठे से दबाते ही वह कैलाश पर्वत सहित जड़ स्तब्ध होकर फंस गया, आपकी अलौकिक महिमा शक्ति की जय हो ।

तत्वार्थ—हे योगेश्वर प्रभो ! हठयोगी राक्षसराज ने आपके परम दिव्य अर्द्धनारीश्वर स्वरूप का आवाहन कर षट्चक्रस्थ केन्द्रों में अन्तर्याग कर बलसंयम सिद्धि कर देव-दुर्लभ अपराजित बल प्राप्त किया—आपकी योग विभूति की जय हो। जब कृतघ्न रावण ने दम्भवश हठ योग द्वारा श्री विद्यैश्वर्य प्राप्ति के ध्येय से आपके विश्राम-स्थल (**आज्ञा चक्रस्थ मध्य विन्दु**) का अनधिकार उत्क्रमण करने की चेष्टा की तो आपके **भ्रूनिक्षेप रश्मि प्रसार** मात्र से वह असंतुलित होकर पुनः पाताल में अर्थात् मूलाधार चक्र में पतित हो गया—आपकी तंत्रातीत योगमाया शक्ति की जय हो ॥ १२ ॥

आचार्य श्री पुष्पदन्त ने इस श्लोक में प्राणोत्कर्षिणी नाम की तंत्रोक्त विद्या के अनधिकार प्रयोग का परिणाम और प्राण-रश्मि मंथन क्रियात्मक अर्द्धनारीश्वर बीजाक्षर का संकेत किया है। अर्द्धनारीश्वर स्वरूप तंत्रों में अद्वैत सिद्ध परमब्रह्म का स्थूल प्रतीक है। हठ योगी या राजयोगी मनोमय कोष पर अधिकार प्राप्ति के पश्चात् विज्ञानमय कोष की सिद्धि साधना में अर्द्धनारीश्वर रूप स्थूल प्रतीक को अन्तर्याग द्वारा साक्षात् करने के पश्चात् ही वैदिक मंथ विद्या और तंत्रोक्त प्राणरश्मि संचार एवं आकुंचन, संकोचन, विलीनीकरण क्रिया द्वारा विज्ञानमय कोष के अधिदैवत अर्द्धनारीश्वर रूप दिव्य महा-प्रकाश से **तादात्म्यभाव सिद्धि** कर सर्वज्ञता और सृष्टि चक्र-नियंत्रणकर्त्ता के समकक्ष सामर्थ्य अर्जन करने में सफल होते हैं, **किन्तु** भोगवासना का परमाणु किंचित् भी रहने पर योगी पथ-

भ्रष्ट हो **अधः पतित** हो जाता है—क्योंकि इस क्षेत्र में तीव्र-तर मनःरश्मि एवं प्राणरश्मि समूह का प्रतिक्षण संघर्ष होता है। अतः मानसिक बौद्धिक स्नायु-तंतु अति कोमल सम्वेदनशील रहते हैं जिनकी धैर्य तथा गम्भीर निरीक्षण से केवल ध्याता ही स्पष्ट अनुभूति कर पाते हैं। ॥ १२ ॥

बीजाक्षर 'य'; जप संख्या; १०,००० स्थान मणिपूर चक्र;
पूजा यंत्र

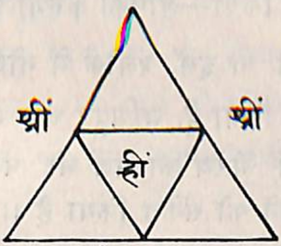

हंसः नमः

विशेषाहुति-विल्वपत्र, त्रिमधु; फलश्रुति-निधिप्राप्ति, तैजस् प्राप्ति।

यदृद्धिं सुत्राम्णो वरद ! परमोच्चैरपि सती-
मधश्चक्रे बाणः परिजनविधेयास्त्रिभुवनः ॥
न तच्चित्रं तस्मिन् वरिवसितरित्वच्चरणयोः।
न कस्याप्युन्नत्यै भवति शिरसस्त्वय्यवनतिः ॥ १३ ॥

भावार्थ—हे वरद ! वाणासुर ने आपको नमस्कार करने मात्र से इन्द्र की सम्पत्ति को नीचा दिखाने वाली सम्पत्ति प्राप्त की थी और त्रिभुवन को अपना परिजन (**अनुचर**) बना

लिया था। यह आश्चर्य की बात नहीं है--क्योंकि आपके चरणों में नमस्कार करना किस उन्नति का कारण नहीं होता ? ॥ १३ ॥

तत्वार्थ--हे विश्वपिता महेश्वर ? दैत्यराज वाणसुर ने आपके यक्षेश्वर स्वरूप की (**श्री सम्वर्त्तेश्वरनाथ श्री समयाम्बा**) अधश्चक्र अर्थात् मणिपूर में अन्तर्याग नियमित किया सर्वार्पण सहित--तो अपने ६२ तैजस् मयूखाओं सहित उसे दिव्यैश्वर्य प्रदान कर कृतार्थ किया--आपकी करुणा शक्ति की जय हो।

आचार्य श्री ने इस श्लोक में नीलाचार क्रम से श्री विद्यार्चन का संकेत किया है, मणिपूर चक्र में और सद्यःसम्पत्तिप्रद श्री स्वर्णाकर्षण भैरव का मंत्र भी पंचकादि बीजाक्षरों के सहित उच्च साधकों को संकेत किया है ॥ १३ ॥

बीजाक्षर 'अ'; जप संख्या ५०००; स्थान सहस्रार चक्र;

पूजा यंत्र

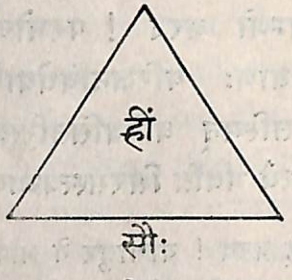

विशेषाहुति-पद्माज्य, मधु, श्वेतचन्दन; फलश्रुति-लक्ष्मीसिद्धि, रससिद्धि।

अकाण्ड ब्रह्माण्ड क्षय चकित देवासुर कृपा।
विधेयस्याऽऽसीद्यस्त्रिनयनविषंसंहृतवतः ।।
स कल्माषः कण्ठे तव न कुरुते श्रियमहो-
विकारोऽपिश्लाघ्यो भुवनभयभङ्गव्यसनिनः ।। १४ ।।

भावार्थ–हे त्रिनयन जगत्पिता ! समुद्र-मंथन के समय हलाहल विष के प्रकट होनेपर सृष्टिनाश के भय से चिंतित देवताओं-असुरों को भयभीत देखकर आपने विश्व-कल्याण की भावना से वह कालकूट विष पान कर लिया। उस विष की मारक तीव्रता से आपके कण्ठ नीले हो गये और विष की वह कालिमा भी भूषण की तरह आपके कण्ठ की शोभा बन गयी ।। १४ ।।

तत्वार्थ–हे पिता ! आपकी योगशक्ति की जय हो। आपने कालकूट विष की ज्वाला से दग्ध हताश एवं निराश देव-असुरों की तथा ब्रह्माण्ड की रक्षा के लिये निर्भय होकर उस भयंकर विष को क्षणमात्र में पान कर लिया और वह विष आपके कण्ठ में अद्यावधि अपनी नीली प्रभा दिखाता है भक्त जनों को। महेश्वर आपने योग एवं तंत्र की महत्ता को प्रदर्शित करने के लिये ही विष को पान किया एवं सृष्टि की रक्षा की। आपकी योगविभूति शक्ति की जय हो, जय हो।

आचार्य श्री पुष्पदन्त ने इस श्लोक में प्रकृति एवं पुरुष के अभेदत्व तथा तंत्र सिद्धि की रहस्य-साधना का संकेत

किया है। **उदाहरण** कालकूट हलाहल विष प्रकृति की तत्व-रचना शैली की अव्यर्थ मारक धर्मापदार्थ है। योगेश्वर शिव ने विषपान क्यों किया ? वे दृष्टिमात्र से विष को भस्मीभूत कर सकते थे ? **वेद में वर्णन** है कि प्रकृति पंचतत्व प्रधान है, तत्वों को नष्ट नहीं किया जा सकता—ये तत्व केवल मूल स्वरूप से भिन्न रूपों में परिवर्तित किये जा सकते हैं और तभी इन तत्वों का गुण-धर्म भी नियंत्रित किया जा सकता है। मूल विष रूप में हलाहल को भस्म कर देने पर उसके सूक्ष्म परमाणु **वायु तत्व** का आधार लेकर अति प्रउल हो सृष्टि नष्ट कर देते। विष पृथ्वी पर प्रकृति की अग्नि तत्वात्मक रचना का स्थूल स्वरूप है—अतएव भगवान् शिव ने **विशुद्धि चक्र** स्थान कण्ठ में जो कि वायु तत्व का केन्द्र है और अष्टकोणात्मक-इस वायुतत्व की ५४ कलाएँ हैं। ५० कलाएँ तो सूक्ष्म तरंगरूपा हैं, चार कलाएँ बीज रूपात्मक (**यं रं लं वं**) कही गयो हैं जो क्रमशः शोषण, दाहन, जड़त्व और द्रवात्मक गुणों का बोध कराती हैं (अर्थात् वायुतत्व पर पूर्णाधिकार प्रयोगात्मक करने पर सृष्टि के कठोर से कठोर मारक धर्मा वस्तु को शुष्कीकरण करने पर वह वायु के दबाव से फटता चला जायेगा और सिकुड़ते-सिकुड़ते वह पदार्थ बहुत कम रहने पर जड़ अर्थात् गतिशून्यत्व स्थिति में आकर वायु के असह्य दबाव से द्रवरूप में परिवर्तित हो जायेगा—और वायुतत्व चूंकि धूम्रवर्ण है अतः दबाव की पराकाष्ठा पर उस पदार्थ का रंग भी नीला घनीभूत नजर आयेगा और वह निसत्वधर्मी रूप में परिवर्तित्त हो जायेगी वस्तु)। यहां पर साधक को यह भी

स्पष्ट होता है कि पृथ्वी तत्वामत्क पदार्थ वायु के असह्य दबाव से अत्यद्भुत गतिशील होकर प्रकाश तरंगों के रूप में परिवर्तित होकर अग्नितत्व से ज्वलन-धर्म को ग्रहण कर भयंकर विस्फोटक हो जाते हैं यथा यूरेनियम, प्लूटोनियम आदि) । **भयंकर** हलाहल विष को पान कर योगधारणा द्वारा आज्ञा चक्रस्थ तथा अनाहत चक्रस्थ वायुतत्व के सम्पुट में आबद्ध कर विशुद्धि चक्रस्थ वायु केन्द्र का मुक्त प्रयोग कर योगेश्वर शिव ने हलाहल विष को पचा डाला और नीलकण्ठ नाम से प्रसिद्ध हुए । योग की प्रत्यक्ष सार्थकता को प्रकट करने वाले पिता आपकी जय हो ॥ १४ ॥

बीजाक्षर 'अ', जप संख्या १०,०००; स्थान मणिपूर चक्र; पूजा यँत्र

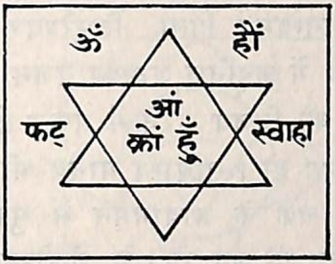

विशेषाहुति-चन्दन, मधु, द्राक्षा, जातिफल, सरसों; फलश्रुति-शत्रुनाश, ।

असिद्धार्था नैव क्वचिदपि सदेवासुरनरे ।
निवर्तन्ते नित्यं जगति जयिनोयस्यविशिखाः ।।
सपश्यन्नीशत्वामितर सुरसाधारणमभूत ।
स्मरः स्मर्तव्यात्मा नहिवशिषु पत्थ्यः परिभवः ।। १५ ।।

भावार्थ—हे योगेश्वर त्रिपुरारि ! आप जैसे त्यागी जितेन्द्रिय महापुरुष का अनादर करने पर त्रैलोक्य विजयी कामदेव क्षणमात्र में भस्मीभूत हो गया, आपकी रौद्र प्रभा-शक्ति की जय हो । हे प्रभो—वह कामदेव अपने अभिमानवश अन्य सामान्य देवों की तरह ही आपको समझ बैठा और अशिष्ट उद्ण्डतावश आपकी क्रोधित भ्रूदृष्टि से उत्पन्न अग्नि ज्वालाओं में विलीन हो गया । आपके रक्ताभ त्रिनेत्र की जय हो ।

तत्वार्थ—आनन्दमय पिता त्रिपुरेश्वर ! जो साधक श्रेष्ठ मणिपूर चक्र में अहर्निश आपका यजन करते हैं वे देव, असुर-मानवसमूह की विजय करने में सफल होते हैं । आपकी करुणाशक्ति की जय हो । सामान्य मानव भी आपको स्मरण करते-करते शृष्टि चक्र के आवागमन से मुक्त हो जाते हैं । आपकी महिमाशक्ति की जय हो । हे त्रैलोक्यस्वामी महारुद्र (**त्वां पश्यन् स स्मर्त व्यात्मा देवासुर नरे**) जो साधक कुल क्रमाचार से आपका साक्षात्कार करते हैं वे जीवनमुक्त धन्य-भागी देव-असुर नरसमूह में सर्वदा के लिये प्रातःस्मरणीय हो जाते हैं । आपकी जय हो ।

इस श्लोक में आचार्य श्री ने कौलाचार क्रम की अपराजिता विद्या का साधन तथा मंत्रोद्धार संकेत करते हुए वशङ्करी एवं विध्वंसकरी रश्मिप्रयोग का दिग्दर्शन किया है। सौरमंडल में सूर्य एवं चन्द्र ही आकर्षण-विकर्षण विद्युत-शक्ति के अक्षय भण्डार हैं–यौगिक धारणा से सौर मण्डलीय विद्युत को जो कि ४० लाख वॉट के लगभग दाहक शक्तियुक्त है, सिद्धयोगी संकल्प बल से शून्यातिशून्य तापमान में बदलकर अपने चक्रस्थ भण्डारों में संग्रह कर लेता है और आवश्यकता पर यही विद्युत चन्द्र नाड़ी क्षेपण करने पर वशङ्करी बन जाती है। सूर्य नाड़ी से निक्षेपण करने पर विध्वंस का ताण्डव होता है।

बीजाक्षर 'म', जप संख्या १,००,०००; स्थान मूलाधार;
पूजा यँत्र

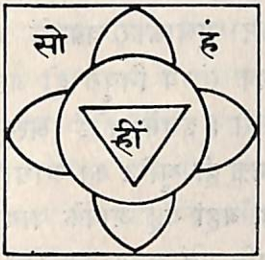

हवनीय-द्रव्य, दूर्वा, गुग्गुल, त्रिमधु; फलश्रुति-साक्षात्कार।

महीपादाघाताद् व्रजति सहसासंशयपदम् ।
पदं विष्णोर्भाम्यद् भुजपरिघरुग्णग्रहगणम् ॥
मुहुर्द्यौ दौस्थ्यं यात्यनिभृतजटाताडिततटा ।
जगद्रक्षायै त्वं नटसि ननु वामैवभुविता ॥ १६ ॥

भावार्थ—हे प्रभो आप जगत् की रक्षा के लिये राक्षसों को ताण्डव नृत्य से मोहित करके नाश करते हैं। तभी जगत् का कल्याण होता है—ताण्डव नृत्य के समय आपके चरणों के आघात से पृथ्वी धंसने लगती है, विशाल भुजाओं के स्पर्श-संघर्ष से नक्षत्रमण्डल सहित आकाश कम्पित हो जाता है—हे महेश्वर आपकी उन्मुक्त चंचल जटाओं के झटके से स्वर्ग भी हिलने लगता है। ठीक ही है उपकार भी किसी के लिये अहितकर हो जाता है। आपकी जय हो ॥ १६ ॥

तत्वार्थ—हे प्रलयँकर रुद्र ! आपके दिव्य चिन्मय प्रकाश स्वरूप का योगीजन मूलाधार चक्र में जब ध्यान करते हैं तब उनके अष्टपाशात्मक संशय निवृत हो जाते हैं आपके ताण्डवोत्सुक पद प्रहार से। इसमें कोई अत्युक्ति नहीं है। क्योंकि पृथ्वी तत्वात्मक चक्र ही श्रृष्टि का आधार विन्दु एवं भेदात्मक प्रवृत्ति का स्रोत है, वहां यह आपके पादाघात मुद्रा का ध्यान रहस्ययोगी को गति एवं लक्ष्य का बोध कराता है। आपके श्री चरणकमलों की अद्भुत सूक्ष्म स्पन्दनगति विद्या-अविधा रूप धारण करती है--गति विक्षेप में अण्वाणुओं की सृष्टि होकर उनसे सूर्यमण्डल बन जाता है और भ्वादि गोलक ग्रहों

की उत्पत्ति होती है और क्रमशः भू अपराग्नि वाय्वाकाश वर्तमान दृश्यतत्वों का निर्माण होकर विश्व, जीवन, सृष्टि का प्रादुर्भाव होता है। ब्रह्मा विष्णु आदि को उनके सर्जन में किंचित् मात्र भी प्रयास नहीं करना पड़ता है। ये सभी ग्रह-लोक आपके प्रकाशकाय के गुरुत्वाकर्षण में वृद्धि नियमित गति से परिभ्रमण करते हैं और श्रीभूशक्ति, इस सम्पूर्ण ग्रह-मण्डल को धारण करती हुई भी स्वयं गतियुक्त है। आपके ताण्डव मनोहारी नृत्य की विभिन्न मुद्राओं से कोटि-कोटि ब्रह्माण्डों की उत्पत्ति एवं लय अहर्निश हो रहा है, और आप इस बृहत् सृष्टि में लय होते हुए अण्वाणुओं की भस्म से विभूषित गात्र **सदाशिव** अहर्निश नृत्य कर रहे हैं। यही आपका अमरत्वमय महाताण्डव देखकर मैं कृतार्थ हो गया हूं—हे आदिनाथ आपकी जय हो।

आचार्य श्री पुष्पदन्त ने इस श्लोक में भगवान् महेश्वर के मृत्युञ्जय योग का यथार्थ संकेत किया है उत्तराम्नाय और उर्ध्वाम्नाय के दिव्य वीर साधकों के आनन्दार्थ। साथ ही वेदोक्त चाक्षुषी विद्या एवं दहर विद्या का भी सूक्ष्म मंत्रोंद्धार इसमें है। मूलाधार से मणिपूर तक की कुण्डलिनी प्रक्रिया का दिग्दर्शन **पदं विष्णो** शब्द से उन्होंने संकेत कर कुण्डलिनी साधनकाल में होने वाले विक्षेप का भी स्पष्ट वर्णन **भ्राम्यद् रुग्ण ग्रहगणम्** शब्द में किया है—और कुण्डलिनी महाशक्ति की महत्ता एवं विशेषता को **वामैवविभूता-ता, वाम, एव विभु** अर्थात् वह भूशक्ति ही वाम-कुण्डलिनी है विश्वम्भर शिव की,

इसीलिये वि उपसर्ग के साथ भु शब्द का दिग्दर्शन कर आचार्य श्री ने अपनी प्रखर प्रतिभा दिखायी है ।। १६ ।।

बीजाक्षर 'वि'; जप संख्या १५,०००; स्थान द्रद चक्र;

पूजा यन्त्र

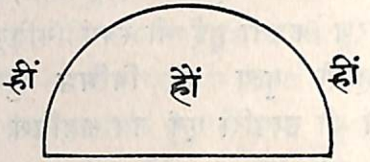

तत्त्व मसि

हवनीय–द्रव्य, दाणिमपुष्प, द्राक्षा, मध्वाज्य;

फलश्रुति–विज्ञानमय कायसिद्धि ।

वियद्व्यापी तारागणगुणितफेनोद्गमरुचिः ।
प्रवाहो वारां यः पृषत लघुदृष्टः शिरसि ते ।।
जगद्वीपाकारं जलधिवलयं तेन कृतमित्येन ।
नैवोन्नेयं धृतमहिम दिव्यं तव वपुः ।। १७ ।।

भावार्थ—हे ईश ! तारागणों की कांति से अत्यन्त शोभायमान आकाश में व्याप्त तथा भूलोक को चारों ओर से घेर कर जम्बूद्वीप बनाने वाला गंगा का जल-प्रवाह आपके जटाकलाप में बूँद से भी लघु देखा जाता है। इतने से ही आपके दिव्य तथा श्रेष्ठ शरीर की कल्पना की जा सकती है।

तत्वार्थ—हे पिता परमेश्वर ! आपके सहस्रार में स्थित विश्व ब्रह्माण्ड को आवेष्टित कर कुण्डलिनी शक्ति जो शुभ्र प्रकाश रश्मियां निक्षेपण करती हैं उससे आकाशस्थ तारामण्डल एवं तारिका समूह भी गंगा की फेन राशि की तरह मलीन एवं निष्प्रभ ज्ञात होता है। जो प्रशान्त योगीजन आपके दिव्य शरीर में विश्वजननि कुण्डलिनी के इस वलय आरोह-अवरोह को आज्ञाचक्र द्वारा देखने का सौभाग्य प्राप्त करते हैं वे प्राणोत्कर्षिणी विद्या का ज्ञान प्राप्त करके कृतकृत्य हो जाते हैं–आपकी योगधारणा शक्ति की जय हो, विश्व लीलाशक्ति की जय हो।

इस श्लोक में आचार्य श्री ने विज्ञानकाय सिद्धि तंत्र का रहस्य तथा ५२ आप्य मयूखा एवं श्री मेघेश्वरनाथ अमृताम्बा की तंत्रोक्त अन्तर्याग क्रम और गंगा की उत्पत्ति का प्रकरण स्पष्ट किया है। **सहस्रार** में कुण्डलिनी की वलात् अवरुद्धता से तीव्र उत्ताप होने पर भगवान् शिव ने ५२ जलीय मयूखाओं की धारणा की तो वह **तीव्र कोटि भास्कर समान** कुण्डलिनी प्रकाश ही द्रवित होकर गंगा के रूप में प्रकट हो गया। इसीलिये तंत्रागम पुराणादि ने **गंगाजल** को **महापाप प्रणाशनम्** कहा है ॥ १७ ॥

बीजाक्षर 'र'; जप संख्या ५०००; स्थान मणिपूर चक्र;

पूजा यंत्र

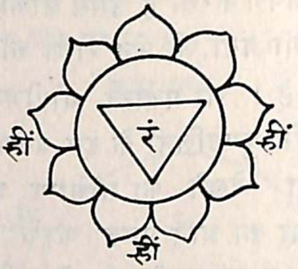

हवनीय–द्रव्य, मध्वाज्य, मलयज, विल्वपत्र, श्रीफलम्;

फलश्रुति–मनोमय कार्यसिद्धि ।

रथः क्षोणी यन्ता शतधृति नगेन्द्रो धनुरथो ।
रथाङ्गे चन्द्राकौरथचरणपाणिः शर इति ॥
दिधक्षोस्ते कोऽयं त्रिपुर तृणमाडम्बर विधि-
र्विधेयैः क्रीड़न्त्यो न खलु परतन्त्राः प्रभुधियः ॥ १८ ॥

भावार्थ—हे महेश्वर ! तृण की तरह त्रिपुर को नष्ट करने के लिये पृथ्वी का रथ, ब्रह्मा को सारथी, हिमालय को धनुष, सूर्य-चन्द्र को रथ का चक्र, विष्णु को विषधर बाण बनाना आपका आडम्बर मात्र है–क्योंकि आप अपनी माया-शक्ति द्वारा क्षणमात्र में त्रिपुर को नष्ट कर सकते थे । हे प्रभो, विचित्र वस्तुओं से क्रीड़ा करते हुए समर्थों की बुद्धि स्वतंत्र होती है, आपकी लीलाशक्ति की जय हो ।

तत्वार्थ––हे पिता योगेश्वर! आपके श्री चरणकमलों का ध्यान कर योगीजन उस पृथ्वी तत्त्वात्मक योगाधार भूमि में आरूढ़ होते हैं जो पार्थिव जगत् की दृश्यमान स्थिर परतंत्रता से अर्थात् भ्रमात्मक अविद्या से बुद्धि को भोगक्रीड़ा रूप चंचलता से मुक्त कर आनन्द प्रदान करती है! यथा (**विधेयैः-ताक्षोणी रथः-परतंत्रा क्रीडन्ति धियः न खलु––(तदानन्दं लभन्ते योगिनः-प्र उपसर्ग भु स्थैर्यधारणायां-यत्र**) विधिः-ब्रह्मा नियन्ता अर्थात् सारथी रूप में प्राप्त होते हैं। ऐसा कहने का तात्पर्य है कि सारथी गन्तव्य स्थल पर आरोही को पहुंचाता है (इस जागतिक न्याय के अनुसार) हे परमेश्वर शिव-स्वाधिष्ठान अधिष्ठातृ ब्रह्मा प्रजननशक्ति के बोधक हैं। वह इस योगी की संकल्प शक्ति के वशवर्ती हो उसे ऊर्ध्वरेता करते हैं। एवं (**चन्दार्कौरथ चरण**) अर्थात् सूर्य-चन्द्र दिवा-रात्रि बोधक-रथ के चरण कहे गये हैं–अहर्निश दिनप्रतिदिन उत्कट साधना द्वारा मूलाधार से लक्ष्य की ओर अग्रसर करते हैं। **चरणौगति सूचकः भ्रमयन् बोधार्थक चरणः**––हिमालय की तरह निर्विकार स्थैर्यभाव से धनु अर्थात् संकल्प वृत्ति को धनुष की तरह तानकर (**पाणिः शर इति विष्णु प्राण रूपस्तु (बाणः) भेदनसूचक अस्त्र विशेषं सन्धानयति तदा त्रिपुर, अविद्या-अस्मितायां-त्रिताप रूप त्रिपुर दहन भूत्वा परमानन्द पद माप्नुवन्ति इत्यर्थः**)।

इस श्लोक में आचार्य श्री ने आरोह क्रमानुसार श्रीविद्या के कुण्डलिनी उत्थान साधन का तथा कामकला सिद्ध विद्या का अन्तर्याग एवं मंत्रोद्धार कूट शब्द प्रक्रिया से प्रदर्शित किया

है कीलावधूतों को ॥ १८ ॥

बीजाक्षर 'ह'; जप संख्या १,००,०००; स्थान सहस्रार;

पूजा यंत्र

हवनीय-द्रव्य, पद्मपुष्प, त्रिमधुचन्दन, क्षीराज्य;
फलश्रुति-योगैश्वर्यप्राप्ति ।

हरिस्ते साहस्रे कमलबलिमाधाय पदयोर् ।
यदेकोनेतस्मिन्निजमुदहरन्नेत्रकमलम् ॥
गतो भक्त्युद्रेकः परिणतिमसौचक्र वपुषा ।
त्रयाणां रक्षायै त्रिपुरहर जागर्तिजगताम् ॥ १९ ॥

भावार्थ—हे त्रिपुरारि ! विष्णु आपके श्रीचरणों में प्रतिदिन कमलपुष्पों का उपहार देते थे। एक दिन एक कमल पुष्प कम होने पर उन्होंने अपने कमलवत् नेत्र को निकाल कर अर्पित किया—यह भक्ति की परम सीमा चक्र के रूप में आज भी

संसार की रक्षा किया करती है–आपकी महिमाशक्ति को जय हो।

तत्वार्थ––हे त्रिपुरहर ! आपकी जय हो। परमश्रेष्ठ साधक श्रीविष्णु ने आपके श्री चरणकमलों का––योगैश्वर्य विभूति प्रसाद पाने के लिये क्रौञ्च द्वीप में अन्तर्याग अनुष्ठान को आरम्भ कर कमल बलि प्रदान करना आरम्भ किया। **हरिः ते-स-अ ह स्त्वं कं ल-आधाय चिन्तयति भक्तया-परिणति-असौ भवतु-चक्र वपुषा-त्रयाणां त्रितापेण रक्षायै जगताम्**। योगी विष्णु ने आपका प्रतीक शिवरूप **ह** शक्ति **स** कामः **क** क्षिती **ल जार्गातिमाया ह्रीमित्येव हादि पञ्चदशी विद्यासाधन कृत पूर्वमित्यर्थ**। और इस महान् अनुष्ठान में उन्होंने अपने नेत्र कमल आपके श्रीचरणों में अर्पित कर दिये––अर्थात् आप श्री के पदाम्बुज में आत्मसमर्पण लक्ष्य तल्लीनता द्वारा ऐसी तैजस् शक्ति प्राप्त की, जिससे आज भी उसी दिव्य चक्राकार दृष्टि-शक्ति से महाविष्णु जगत् की रक्षा करते हैं। आपकी वरद शक्ति की जय हो, जय हो।

इस श्लोक में श्रीविद्या के अन्तर्याग और मंत्रोद्धार का संकेत है॥ १६ ॥

बीजाक्षर 'क'; जप संख्या १०,०००; स्थान आज्ञाचक्र;
पूजा यँत्र

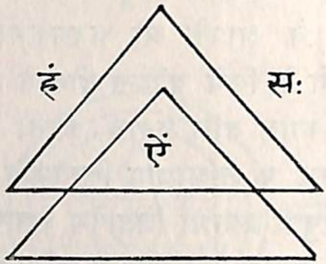

हवनीय–द्रव्य, विल्वपत्र, मध्वाज्य, द्राक्षा, तिल, चन्दन;
फलश्रुति–संकल्पसिद्धि, दिव्यदृष्टि ।

क्रतौ सुप्ते जाग्रत्त्वमसि फलयोगे क्रतुमताम् ।
क्व कर्मप्रध्वस्तं फलति पुरुषाराधनमृते ।।
अतस्त्वांसम्प्रेक्ष्य क्रतुषु फलदानं प्रतिभुवम् ।
श्रुतौ श्रद्धां वद्ध्वा दृढ़परिकरः कर्मसुजनः ।। २० ।।

भावार्थ–हे त्रिपुरहर ! आपही को यज्ञ का फलदाता समझकर वेद में दृढ़ विश्वास कर मनुष्य कर्मों का आरम्भ करते हैं । क्रियारूप यज्ञ के समाप्त होने पर–आपही फल देने वाले रहते हैं । आपकी आराधना के विना कर्म फलदायक नहीं होता है । कर्मफलविधायक भगवान् श्री कामेश्वर आपकी जय हो ।

तत्वार्थ–हे यज्ञस्वरूप परमेश्वर ! आपकी उपासना करते हुए मरनेवाले भी महान् भाग्यशाली हैं । क्योंकि आपकी आराधना के द्वारा प्राप्त पुण्य राशि से **क्व** कोई भी **कर्म** सकाम अथवा निष्काम क्रिया (**प्र उपसर्ग-ध्वस्तं**) नष्ट होने पर भी **फलति** फल देती है, सफल होती है । (**आराधन मृते पुरुषं**) माहेश्वर व्रतादिरत भक्त पुरुष को मृत्यु के पश्चात्–यह आपकी महदाश्चर्यकारक आपकी भक्तवत्सलता कारुण्य शक्ति का प्रभाव है–आपकी जय हो । हे सदाशिव–श्रुति अर्थात् वेदों का कथन है श्रद्धारूप दृढ़पाश से बद्ध जीवात्मा-फलकांक्षामय कर्मों को आपके श्रीचरणों में पूर्णाहुतिस्वरूप आत्मार्पण भाव से निवेदन करते हैं । वे सशरीर जीवनमुक्त हो आपके सारूप्य भाव को प्राप्त होते हैं **अर्थात्** मृत्युभय रूप कठोर बंधन को– आप भक्त के संकल्पात्मक आत्म-निवेदन को स्वीकार कर उस जन्म मृत्यु से भयार्त्त पुरुष को **त्वमसिभुवम्** अर्थात् तुम ही पृथ्वी अन्तरिक्ष स्वर्गपर्यन्त व्याप्त यज्ञस्वरूप परम तैजस् हो- यह देवदुर्लभ ब्रह्मज्ञान प्रदान करते हैं । आपकी चिन्मय विमर्शशक्ति की जय हो ।

इस श्लोक में आचार्य श्री ने मणिपूर चक्रस्थ प्राणाग्निमय वेदि पर पापपुरुष दहन रूप अध्वशोधन यज्ञ-और उस यज्ञ के फलस्वरूप शिवत्व बोधभाव का ही संकेत प्रदर्शित किया है, यथा–(**प्रति**) प्रति **दिने** (**भुवम्**) **भुवर्लोकस्वरूप दिग्दले** (**मणिपूरे**) **प्राणाग्निमध्ये पापपुरुषं जुहोमि-एवं क्रतुषु पुरुषाराधनमृते-भक्त उपासनायां प्रत्यहे मृते फलति-तत्त्वमसिति महावाक्य रूप**

बोध ज्ञानप्राप्ति इत्यर्थः) और इसी को श्रुति ने **यज्जाग्रतो दुरमुदैति-तन्मे मनः शिव संकल्पमस्तु** इस प्रकार यजुर्वेद शिवाध्याय में वर्णन किया है ॥ २० ॥

बीजाक्षर 'क्रि'; जप संख्या ५०००; स्थान मूलाधार;
पूजा यंत्र

हवनीय-द्रव्य, सर्षप तिलाज्य, मधु, नारिकेल; फलश्रुति-संतान प्राप्ति। (मंत्रोद्धार-ह्रीं हसौं क्लीं ह्रीं क्लीं नमः)

क्रियादक्षोदक्षः क्रतुपतिरधीशस्तनुभृता ।
मृषीणामार्त्विज्यं शरणद सदस्याः सुरगुणाः ॥
क्रतुभ्रंशस्त्वत्तः क्रतुषुफलदान व्यसनिनो ।
ध्रुवं कर्त्तुः श्रद्धाविधुरमभिचाराय हि मखा ॥ २१ ॥

भावार्थ—हे शरणदाता शम्भो ! जिस समय कर्मकाण्ड में चतुर मित्थ्याभिमानी राजा दक्ष के यज्ञ में सिद्ध ऋषिजन

ऋत्विज थे और देवगण सदस्य थे उस समय आपने उनका यज्ञ विध्वंस किया था। क्योंकि आपका तिरस्कार कर वह यज्ञ-फल की कामना कर रहा था–आपकी श्रद्धा से रहित वह यज्ञ-दक्ष प्रजापति को अभिचार रूप होकर के विनाशकारक हो गया। आप परम पुरुष यज्ञब्रह्म से उपेक्षित यज्ञ का फल शुभ कैसे हो सकता था प्रभो ?

तत्वार्थ–हे कर्मकुशल जनों में श्रेष्ठ योगेश्वर आपकी जय हो। पिता शिव आपही विश्व सृष्टि यज्ञ के प्रधान देवता हैं और शरीरधारियों के स्वामी भी आप ही हैं–आपकी जय हो। ऋषिगण आपको धर्मत्राता एवं भक्तों को शरण देकर अभय प्रदान करने के कारण अभयंकर नाम से बारम्बार नमन करते हैं–आपकी जय हो, जय हो। देवगण आपको (**सदस्याः–अस्याः सत्**) यह सत् स्वरूप आपही हैं ऐसा कहकर सतत वन्दना करते हैं आपकी। हे परमात्मन् (**त्वत्त; क्रतुभ्रंश**) आपही सृष्टि रूप यज्ञ के आधार हैं सत् गुणान्वित होने पर–और रजोगुणान्वित होने पर आपही यज्ञ फलरूप पुष्टि अर्थात् सृष्टिपोषण करते हैं–आपकी जय हो। हे महारुद्र ब्रह्म ? आप (**व्यसनिनो-व्यसनस्तु तमसः संज्ञा**) तमोगुणान्वित होने पर (**अभिचाराय हि मखाः**) **विधुरम्** (**विघृम्धातु विस्तारार्थे-विधुरम् शब्द**) सृष्टिरूप यज्ञ को वीभत्स रूप धारण कर छिन्न-भिन्न कर प्रलयंकर नाम को सार्थक करते हैं। निश्चल श्रद्धा वाले शैवजन आपकी अत्यद्भुत त्रिगुणात्मक लीला को जानकर ही आपकी महेश्वर नाम से अर्चना कर जीवनमुक्त

हो जाते हैं–आपकी विलक्षण भेदाभेद दर्शक वृत्तिशक्ति की जय हो । हे परात्पर यज्ञपुरुष शिव ! आपही वेदोक्त यज्ञों का फल प्रदान करने वाले हैं–किन्तु असुर वीर क्रम से यज्ञ द्वारा सिद्धि की आकांक्षा रखने वाले हठयोगी साधक आपके द्वारा विनाश ही को प्राप्त होते हैं देहाभिमानी दक्ष प्रजापति की तरह । आपकी जय हो ।

आचार्य श्री पुष्पदन्त ने इस श्लोक में मणिपूर चक्रस्थ प्राणाहुति यज्ञ अर्थात् **प्राणमन्थविद्या** नाम से **छान्दोग्योपनिषद्** में पञ्चप्राणोपासना (**पञ्चविधि प्राणसामोपासना**) रूपयज्ञ का रूपकालंकार वर्णन किया है, और **अभिचाराय हि मखाः** शब्द के बीच हि शब्द प्रजापति का सम्वोधक है **यथा**– सामगान के समय यज्ञपूर्ति हेतु प्रजापति ब्रह्मा के सम्वोधनार्थ- **हा-ऊ-हा-ई-हि-औ-हौ-पि** आदि तेरह स्वर वैदिक ऋचाओं के मध्य में ह्रस्वदीर्घप्लतु ध्वनि में उच्चारण किये जाते हैं । साथ ही इस श्लोक में **क्रिं** बीजाक्षर से महाकाल पुरुष का तंत्रोक्त प्राणयर्जन भी किया है ।। २१ ।।

बीजाक्षर 'प्र'; जप संख्या १०००; स्थान विशुद्धि चक्र;

पूजा यंत्र

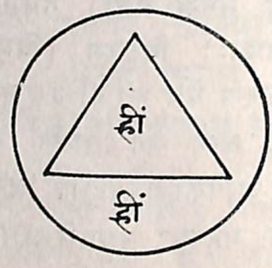

हवनीय-द्रव्य, तिलाज्यशर्करा जपा कुसुम;
फलश्रुति-सौभाग्यवर्धन ।

प्रजानाथं नाथप्रसभमभिकंस्वां दुहितरं ।
गतं रोहिद्भूतां रिरमयिषु मृष्यस्य वपुषा ।।
धनुष्पाणेर्यातं दिवमपि सपत्रा कृतममुम् ।
त्रसन्तं तेऽद्यापित्यजति न मृगव्याधरमसः । २२ ।।

भावार्थ–हे जगत् नाथ ! काल से प्रेरित मृग रूप धारण किये ब्रह्मा को मृगी रूपधारिणी अपनी कन्या के प्रति आसक्त देख आपने लोक मर्यादा रक्षणार्थ जो बाण छोड़ा–वह बाण आज भी आर्द्रा नक्षत्र के रूप में मृगशिर ब्रह्मा के पीछे लगा हुआ है--आपकी सृष्टि रक्षा-प्रवृति को वारम्बार नमस्कार है ।

तत्वार्थ–हे त्यैलोक्याधिपति जगद्गुरो ! आपका स्वाधिष्ठान चक्र में यजन करने वाले शैव सभी भोगों को प्राप्त करते हैं । किन्तु जलतत्वप्रधान स्वाधिष्ठान में तैजस् तत्वका प्राकट्य मन्मथकला (**अनुलोम–विलोम**) वर्णमाला साधन से होता है, जो तत्काल साधक को विषयच्युत करने में समर्थ है (आप सद्गुरु के नाते धनुष्पाणि होकर) साधक की रक्षा करते हैं । तभी वह आरोहण पथ पर गतिमान होता है–आपकी वात्सल्य शक्ति की जय हो । (**नाथ ! प्रसभं-अभि-कं-दुहित-रं-स्वां-वपुषा-संपत्रा बीजाक्षर संयुता त्रसन्तं–तें तैजस् रश्मिः तीव्र कामाग्नि रूपेण साधकानां तदा धनुष्याणि**

दिव्य वीरेश्वरस्वरूपेण तव बाणमेव (द्रां द्रीं ल्कीं ब्लूँ सः स्वाहाठठ) साधकानांरक्षयति तीव्रमनोद्वेगात् इत्यर्थः) ।

आचार्य श्री पुष्पदन्त ने इस श्लोक में वामाक्षेमङ्करी साधन तथा महारुद्र पादुकान्यास का दिग्दर्शन किया है । वामा साधन सद्य सिद्धिप्रद होने से सद्य विक्षेपकारक भी होता है, अतएव श्रीगुरु पादुकान्यास ही रक्षक होता है साधन काल में ।। २२ ।।

बीजाक्षर 'स्व', जप संख्या २१,०००;

पूजा यँत्र

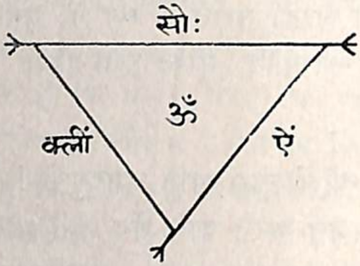

हवनीय-द्रव्य, करवीर पुष्प, विल्व पायस द्वारा रुद्रहस्राहुति; फलश्रुति-सर्वापत्ति निवारण ।

स्व लावण्याशंसा घृतधनुषमादाय तृणवत् ।
पुरः प्लुष्टं दृष्ट्वा पुरमथन पुष्पायुधमपि ।।
यदि स्त्रैणं देवीयमनिरत देहार्धघटना- ।
दवैति त्वामद्धा वत वरद् मुग्धा युवतयः ।। २३ ।।

भावार्थ–हे वरद ! हे पुरमथन रुद्र ! हे यमनिरत योगेश्वर ! देवी पार्वती के सौन्दर्य की आकर्षण शक्ति के भरोसे आपको पराजित करने की इच्छा से कामदेव ने पुष्प-धनुष उठाया था, किन्तु त्रिपुरवध करने वाले देव ! आपने तुरन्त ही अपने विद्युन्नेत्र दृष्टिपात से मन्मथ को सूखे तिनके की तरह भस्म कर दिया। देवी गिरिजा अपने सामने यह दृश्य देखकर भी आपको अधीन समझें तो यह ठीक ही है। क्योंकि प्रायः युवतियां सौन्दर्य दर्पग्रस्त होती हैं।

तत्वार्थ–हे पिता ! त्रिपुरमथन रूप त्रिग्रंथि भेदन कर उन्मुक्त सहस्राराकाश में स्वच्छन्द विहार करनेवाले योगेश्वर ! आपने असमय उदण्डता करने वाले क्रियाभिमानी दैवत मन्मथ को उसके स्थूल-सूक्ष्म-पर सूचक (**गुणमय-मँत्रमय-वासनामय**) धनुष एवं पञ्च तत्व तन्मात्रा जनित पञ्च बाणों के सहित क्षणमात्र में त्रिनेत्र (**मूलाग्निलयात्मिका-पृथक्कीयात्मि करण शक्तिपुञ्ज**) द्वारा प्रस्तार चक्र से तिरोभावस्थ कर उपाज्ञाचक्र में विलय कर दिया। इस महानन्द स्थिति में उत्पत्ति स्थिति-स्वरूप जागतिक प्रपंच शून्यावस्था में भास होते हैं।

इसी अनिर्वचनीय भाव को आचार्य श्री पुष्पदन्त ने (**आनन्दमयी एकात्मभावासमाधि**)को मदन-दहन के आलङ्कारिक स्वरूप में प्रकाश्य किया है। हे कुल पथभेदन क्रियामर्मज्ञ-पिता महेश्वर आपको पुरमथन इसी हेतु कहा गया है। आपकी

महिमा शक्ति की जय हो । हे सर्वतंत्र स्वतंत्र महाकाल पुरुष आपने कामदेव के नष्ट होने पर अपनी प्रिया को जब खिन्न देखा तो स्वाधिष्ठान चक्र में स्थित सूक्ष्म स्रजन कलाशक्ति का स्फुरण विस्तार करके प्रस्तार चक्राधि दैवत मदन को पुनर्जीवन प्रदान कर अर्द्धनारीश्वर स्वरूप धारण कर भगवती पार्वती को त्याग-आकर्षण-आसक्ति-विरक्ति सूचक मुद्राओं से युक्त मनोहारी नृत्य दिखलाकर प्रसन्न किया, आपकी योगेच्छाज्ञान क्रिया-शक्ति की जय हो । मूलाग्नि लयात्मिका पृथक्ककरण शक्तियुक्त त्रिनेत्रधारी शिव आपकी जय हो । श्री पुष्पदन्त ने रूपालङ्कार से कामराजकूट मन्मथ कला की सूक्ष्म पञ्चतन्मात्रा के क्रियात्मक प्रयोग तथा विश्वाकर्षणकारी सौभाग्य चक्र की रहस्यावरण पूजा का प्रकटीकरण तथा माहात्म वर्णन किया है–महामाहेश्वर श्री पुष्पदन्ताचार्य की वाग्विलासशक्ति की जय हो ॥ २३ ॥

बीजाक्षर 'श्म'; जप संख्या १०००; स्थान रुद्र चक्र एवं मणिपूर; पूजा यँत्र

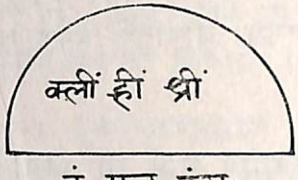

हवनीय–द्रव्य, त्रिमुध, पद्म बीज, मलयज, पँचमेवा; फलश्रुति–सर्वकामनासिद्धि, विजय ।

श्मशानेष्वा क्रीड़ा स्मरहर! पिशाचाः सहचरा-।
शिताभस्मालेपः स्त्रगपि नृकरोटी परिकरः ।।
अमङ्गल्यं शीलं तव भवतु नामैवमखिलं ।
तथापि स्मर्तृणां वरद ! परमंमङ्गलमसि ।।२४।।

भावार्थ–हे स्मरहर वरद ! आपका श्मसान में निवास करना, भूतपिशाचादि को साथ रखना, शरीर में चिताभस्म लेप करना, नरमुण्डों की माला पहनना आदि वीभत्स कर्मों से अमगलरूप स्वरूप दिखाई पड़ता है । तथापि हे देवेश्वर आपका ध्यान और नाम-स्मरण भक्तों को परम मंगलदायक है । आप भयंकर स्वरूर होते हुए भी स्वभक्तों को सर्वार्थ सिद्धि देते हैं– आपकी सिद्धि शक्ति की जय हो ।

तत्वार्थ–हे वरदायक शिव ! आप परम कल्याण के दाता हैं–आपकी योगमायाशक्ति की जय हो । हे आनन्दघन रुद्र, आपके कापालिक स्वरूप का ध्यान करने से भक्तों को समस्त मंगलमय सिद्धियां प्राप्त होती हैं । ह्रद चक्रस्थ अष्टदल पद्म कर्णिका के स्महर यँत्र में अन्तर्याग धारणा के द्वारा सिद्ध कापालिकगण आपका महाभैरव याग कर अमंगल को भी मंगल रूप में परिवर्तित करने की इच्छाशक्ति प्राप्त कर जीवन-मुक्त हो जाते हैं । मणिपूर चक्रस्थ अर्द्धवृत्त त्रिकोणात्मक श्मशान पीठ में **पापपुरुष** की **चिताग्नि साधना** संस्कार कर श्री वज्रेश्वरी हवनान्तर दिव्यचिताभस्म को **सूक्ष्मकायव्यूह** द्वारा अणिशुद्ध अघोर चक्र में आप **नटराजराजेश्वर** को अर्पित करने वाले

दिव्यवीर सिद्धैश्वर्य तथा वरद संज्ञा को प्राप्त होते हैं--आपकी महिमाशक्ति की जय हो।

इस श्लोक में श्री पुष्पदन्ताचार्य ने महावज्रदन्ती सिद्धाम्बा योगिनी सह अघोर भैरव साधना का नीलाचार क्रम से सूक्ष्म अन्तर्योग रहस्य वर्णन किया है जिसकी साधना से **दानवेन्द्र बलि** ने त्रैलोक्य विजय कर दिव्यभोगों को भोगकर पृथ्वीपर अक्षय कीर्ति प्राप्त की थी सत्ययुग में ।। २४ ।।

बीजाक्षर 'म'; जप संख्या १०००, स्थान आज्ञाचक्र;

पूजा यँत्र

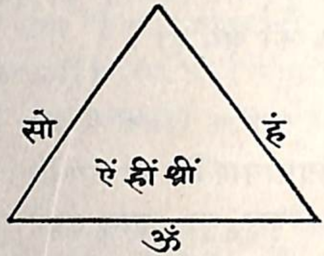

हवनीय–द्रव्य, घृतशर्करा श्रीफल, मलयज, विल्वपत्र; फलश्रुति–ज्योतिदर्शन ।

मनः प्रत्यक्चित्ते सविधमवधायात्त मरुतः ।
प्रहृष्यद्रोमाणः प्रमद सलिलोत्संगित दृशः ।।
यदोलोक्याह्लाद हृदं इव निमज्ज्यामृतमये ।
दधत्यन्त स्तत्त्वं किमपि यमिनस्तत्किलभवान् ।।२५।।

भावार्थ—हे परमपिता शिव ! योगीजन बाहरी विषयों से मन को मोड़कर हृदयाकाश में स्थिर कर **जिस अकथनीय प्रकाश** को देखकर प्राण कुम्भकजन्य परमानन्द से नेत्रों में हर्षाश्रु भरे पुलकित होते हैं जैसे कोई अत्युष्ण ताप से श्रान्त होकर निर्मल अमृतमय जलपूर्ण सरोवर में गोता लगाकर पूर्णसुख और शान्ति को प्राप्त करता है-वह आनन्दघन परम-तत्व अनिर्वचनीय **ब्रह्मज्योति** आप ही हैं। आप ज्ञानगम्य हैं, वाणी से परे हैं। आपका यथार्थ वर्णन श्रुति भी नहीं कर सकती है। हे वेदातीत रुद्र आपके ज्योतिमय स्वरूप की जय हो। हे योगेश्वर रुद्र, योगीजन आपके शुभ्र ज्योतिमय स्वरूप का त्रिदल में साक्षात्कार कर जीवनमुक्त हो जाते हैं। आपके ऐश्वर्य शक्ति की जय हो। इन्द्र-धनुष सदृश विविध वर्ण प्रकाश पुञ्जमय आपके श्रीविग्रह का **सूक्ष्म प्रकाश कण** ही सृष्टि के जीवमात्र में **मनस्तत्त्व** रूप से प्रतिष्ठित है और इसका ज्ञान आपकी कृपा से ही प्राप्त होता है। आपकी योग-मायाशक्ति की जय हो। हे विश्वम्भर ! आज्ञाचक्र से महत्तत्त्वाधार स्थल हृदयाकाश पर्यन्त आपके ज्योतिर्मय श्री-कायव्यूह की प्रकाश रश्मियों को रोचक कुंभक द्वारा जब साधक अन्तर्याग में प्रसार करता है **संकल्प बल** से तो भूतजय सिद्धि और **ब्रह्माणु** दर्शन की योग्यता प्राप्त कर लेता है **विलोम चक्रार्चन** क्रिया द्वारा। आपकी योगविभूतिशक्ति की जय हो।

मनस्तत्त्व को (प्रत्यक्) अर्थात् प्रत्याहार द्वारा चित्त से चित्ततत्त्व के उद्गम महतत्त्व में संयोजन कर (**त्रिबन्धात्मक**)

जालन्धर उड्डियान महाबन्ध की सूक्ष्म प्रक्रिया से अनाहत चक्रस्थ आप सदाशिव का शक्ति सहित **चन्द्रामृत कलाभिषेक** कर सिद्ध योगीजन कृत-कृत्य हो जाते हैं । सदाशिव के ज्योतिर्मय श्रीविग्रह के सावरणार्चन द्वारा उन **दिव्य-भाव साधकों** को नित्य यौवन और दिव्यैश्वर्य भोगों के साथ नित्त्यानन्दमय स्वरूप-दर्शन सिद्धि उपलब्ध होती है जो **योगमाया** की **प्रतिच्छवि** कही गयी है तंत्रागमों में । **योगैश्वर्यपूर्ण महायोगेश्वर त्रयम्बक** आपकी उस अनाहत चक्रस्थ **दिव्य लीलाविलास शक्ति** की जय हो, जय हो ।

इस श्लोक में आचार्य श्री ने गन्धर्वाचार की भावसिद्धि-प्रधान साधना और हठ योग की **प्राणरश्मि विकिरण कला** साधना का रहस्य संकेत कामकला विज्ञान सहित किया है (जिसका **उल्लेख** श्री आदि शँकराचार्य ने सौन्दर्य लहरी के श्लोक संख्या १९ में (**मुखं विन्दुं कृत्वा कुचयुगमधस्तस्यतदधोते मन्मथ कलां**) के रूप में कहा है) । श्री पुष्पदन्त ने निर्गुण ब्रह्मज्योतिस्वरूप की चन्द्रकला विद्या का तांत्रिक अन्तर्याग कौलाचार क्रम से और अमृत बीज, मन्मथ कला बीज, तैजस् कला का **मंत्रोद्धार** भी प्रदर्शित किया है योगाचार से ।।२५।।

बीजाक्षर 'त्व'; जप संख्या ५०००, स्थान स्वाधिष्ठान चक्र;

पूजा यंत्र

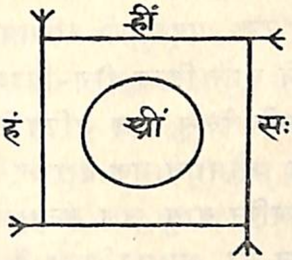

हवनीय–द्रव्य, मधुपायस, मलयज, श्रीपुष्प;

फलश्रुति–सौभाग्यवर्द्धन ।

त्वमर्कस्त्वं सोमस्त्वमसि पवनस्त्वं हुतवह— ।
स्त्वमापस्त्वं व्योम त्वमुधरणिरात्मा त्वमिति च ।।
परिच्छिन्नामेवं त्वयि परिणता विभ्रतु गिरं ।
नविद्मस्त तत्वं वयमिह तु यत्वं न भवसि ।। २६ ।।

भावार्थ––हे विश्वेश्वर ! आपके विषय में ज्ञानीजनों की यह धारणा है कि–**क्षिति** हुतवह क्षेत्रज्ञाम्भः प्रभञ्जन चन्द्रमस्तपन वियदित्यदुष्टोमूर्त्तिर्नमोभव विभ्रते **इस श्रुति** के अनुसार सूर्य चन्द्रमा वायु जल अग्नि आकाश पृथ्वी और आत्मा आपही हैं । किन्तु मेरे विचार से तो ऐसा कोई तत्त्व नहीं जिसमें आप सुप्रतिष्ठित न हों–आपकी ब्रह्माणु-व्यापिनी शक्ति की जय हो ।

तत्वार्थ—हे विश्वेश्वर परब्रह्म आपके भुवनभास्कर भैरवस्वरूप का चिन्तन करने वाला शैव अखिल ब्रह्माण्ड-दर्शन की योग्यता के अधिकार को प्राप्त करता है ? मणिपूर समीपवर्ती सूर्यचक्र में रक्त पद्मवर्ण रश्मिप्रसार का साक्षात् सौभाग्य प्राप्त करने वाले दिव्य वीर–विश्व ब्रह्माण्ड में परमाणु प्रत्यावर्तनशील आपके तैजस् तत्व रश्मि के साहाय्य से **पार्थिव जगत्** को देश-काल सीमान्त तक देखकर कृत-कृत्य हो जाते हैं (आपकी पृथ्वी अग्नि वायु जल तत्त्वात्मक २२४ **कलाओं** का, जो इस ब्रह्माण्ड की आधारशिला हैं–योगीजन **अनुलोम-विलोम-संहार क्रम** से स्पष्ट दर्शन कर सिद्धि संचय में समर्थ होते हैं) । आपकी निरन्तर गतिक्रीड़ा की जय हो । हे अर्द्धचन्द्र कीरीटी मृत्युञ्जय ! दिव्यभाव साधक आपके चन्द्रमुकुट के द्वारा तरंगित १३६ **कला रश्मियों** को ६४ **कलात्मक** मनस्तत्व से संयुक्त कर निर्मल शान्ति प्रभा के अधिकारी होते हैं जिनके दृष्टिपात से ही ज्वरादि उद्वेग एवं नैराश्य नष्ट होकर दीर्घ यौवन तथा चिरस्थायी कांति एवं भोगादि पदार्थ स्वतः उपलब्ध होते हैं कृपापात्र भक्तों को । आपकी जय हो । हे आनन्दमय महाकाल ! आप अग्नि सूर्य शशिमय, द्रुत गतिमय तथा अनन्ताकाशमय हैं । चन्द्राग्नि सूर्यादि सम्पूर्ण तत्त्वपुञ्ज आपके अनन्त शक्ति सागर में विन्दुवत् हैं–आप प्रकृति के **षट् चक्र पद्मों** से अति परे हैं, आपकी जय हो ।

इस श्लोक में श्री पुष्पदन्ताचार्य ने **त्रिबिन्दु तत्व** सूर्याग्नि सोम-स्वरूपस्थिति-शान्ति-पराकला का रहस्य वर्णन किया है ।

इन तीन बिन्दुओं की वाह्य क्रियाएं परस्पर विरुद्धधर्मी हैं किन्तु **योन्याधार** स्थान को पाकर त्रिविन्दु **तत्त्व** की क्रियाओं का सम्मिश्रण तथा लयीकरण प्रारम्भ हो जाता है, और **उन्मनी भाव** जाग्रत हो **स, परार्द्ध कला** का स्फुरण होता है। यही आनन्दमय **समाधि** है। इसमें प्रासाद बीजोद्धार भी है। सूर्य चन्द्र अग्नि विन्दु को तंत्रागमों में वर्णित ध्यान प्रक्रिया से सतत् अभ्यास करने पर रक्त श्वेत कृष्ण वर्ण रश्मिपुञ्ज का—साक्षात् होता है योगी को। और प्रत्येक **जगत्** का **पदार्थ** मात्र जो भी दृश्य है वह इन्हीं तीन विन्दुओं द्वारा ही अण्वाणु उत्पत्ति स्थितिलय की अनन्त प्रक्रिया में रत है। आज के भौतिकवादी विज्ञानवेत्ता **न्यूट्रोन, प्रोटोन, एलेक्ट्रोन,** नाम से जिन तीन मुख्य तत्त्वों का वर्णन करते हैं **सम्भवतः** वे तंत्र के इन्हीं तीन विन्दुओं (**रक्त, श्वेत, कृष्ण त्रिबिन्दु**) द्वारा जगत् उत्पन्न है, गतिशील है। सहस्रार में आज्ञाचक्र को संयोजन करने पर ही योगी को प्रकृति की जटिल एवं सूक्ष्मातिसूक्ष्म गतिप्रक्रिया का भास होता है **दृढ़ दृष्टाभाव** स्थिति के सुपुष्ट होने पर। ऐसा मेरा स्वानुभव है ॥ २६ ॥

बीजाक्षर 'त्र'; जप संख्या १०००; स्थान मूलाधार चक्र;

पूजा यंत्र

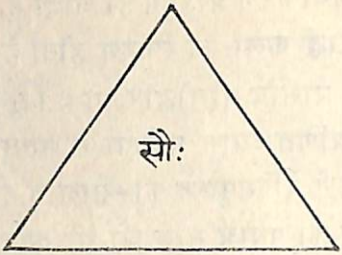

हवनीय-द्रव्य, रक्तपद्म, विल्वफल, तिल, यव, मध्वाज्य;

फलश्रुति-सर्वकामना सिद्धिः, ।

त्रयीं तिस्रो वृत्ति स्त्रिभुवनमथो स्त्रीनपि सुरान् ।
अकाराद्यैर्वर्णैं स्त्रिभिरभिदधत्तीर्ण विकृति ।।
तुरीयं तेधामध्वनिभिरवरुन्धानमणुभिः ।
समस्तं व्यस्तं शरणद् गृणात्योमिति पदम् ।। २७ ।।

भावार्थ–अशान्त-चित्त भक्तों को शरण देने वाले शिव! ब्रह्मस्वरूप बीजाक्षर **अ, उ, म,** भी आपकी ही स्तुति करते हैं। इन्हीं तीनों अक्षरों के द्वारा वेदत्रयी और तीनों स्वरों (**उदात्त-अनुदात्त-स्वरित**) अथवा जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति रूप आपके माया-प्रपंच का दिग्दर्शन होता है। निर्विकार सूक्ष्म ध्वनि ओंकार से आप तुर्यावस्था में स्थित हैं। आपकी जय हो, जय हो।

तत्वार्थ–हे नाद ब्रह्ममूर्ते ! अस्त-व्यस्त भावग्रस्त मूढ़ व्यक्ति भी **ओऽम्** इस पद को ही स्मरण कर आपके शरण को प्राप्त कर कृतार्थ हो जाते हैं—शान्ति प्राप्त करते हैं, **क्योंकि** वैखरीस्वरूप स्थूल ओंकाररूप के उच्चारण द्वारा उनके मन को निरन्तर अभ्यासजन्य एकाग्रता प्राप्त होती है–आपके स्थूल नाद ध्वनिस्वरूप की जय हो। कुलपथानुयायी दिव्य-वीर साधक (**समस्तं व्यस्तं–सं-अस्तं-वि अस्तं-सं शक्ति, (शून्यावस्था प्रतीक, अस्तं-वि, विकल्पस्वरूप अत्यद्भुत तं शक्ति)** आपके प्रपंचस्वरूपा त्रयी, (**त्रिवल्याकृति त्रिवृत्ति सुप्त जाग्रत गतिमान् अवस्थायाम् उपास्य**) त्रिवृत्तात्मिका कुण्डलिनी महा-शक्ति की इच्छा क्रिया ज्ञानस्वरूप त्रिमूर्ति त्र्यम्बक रूप में अन्तर्याग कर–तुरीयावस्था बोधक जो दिव्य धाम है आपका आज्ञाचक्र में, उसका साक्षात् कर विश्व ब्रह्माण्ड को शरण देने की सामर्थ्य प्राप्त करते हैं। वे दिव्य भावमग्न श्रेष्ठ साधक, आप जो **प्राणात्मा** रूप से कायव्यूह में अपने **स्वासोच्छ्वास-क्रिया** रूप डमरू वादन द्वारा अहर्निशद्विपञ्चाशत् स्वर-व्यञ्जन रूप ध्वनि प्रकट करते हैं, उसको षट् चक्रस्थ बीजाक्षर के रूप में प्रत्यक्ष ज्योतिमय साक्षात्कार कर त्रिभुवन विजयी हो जाते हैं, आपकी योगमायाशक्ति की जय हो।

हे जगन्नियता ! सत्व रज तम वृत्तियुक्त आपकी अकारादि वर्ण बीजाक्षार रचना को श्रेष्ठ कौलावधूत षट् चक्रों में **वर्णमाला** क्रम से जब दृढ़ निरन्तर चिन्तन करते हैं तब त्रिवलया कुण्डलिनी की सुषुप्त्यावस्था में (**विकृति**) जात्यन्तर

परिणामध्वनि उत्पन्न होकर–कायव्यूह के परमाणु ज्योतिर्मय होकर–साधक को श्री विद्येश्वर पद की प्राप्ति में सहायक होते हैं–आपके अत्यद्भुत योगप्रपंच की जय हो, जय हो ।

आचार्य श्री पुष्पदन्त ने इस श्लोक में कुण्डलिनी क्रम, वाग्भव बीज-षोड़शी महाविद्या का त्रिकूट बीजोद्धार अन्तर्याग सहित वर्णन किया है । साथ ही भूपुर से विन्दु पर्यन्त **श्री चक्रराज** का सृष्टि स्थिति संहार यजन क्रम त्रिपुटा विद्या के ध्यानात्मक रहस्य के साथ प्रदर्शित किया है ।।२७।।

बीजाक्षर 'भ'; जप संख्या १०,०००; स्थान मणिपूर;

पूजा यँत्र

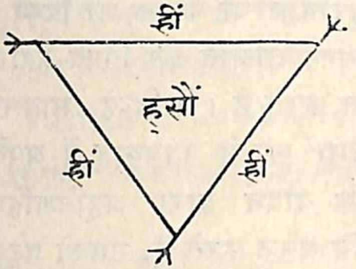

हवनीय-द्रव्य, त्रिमधु, विल्वपत्र, पद्म पुष्प;

फलश्रुति-मुक्तिप्राप्ति, शत्रुनाश ।

भवःशर्वोरुद्रःपशुपतिरघोग्रःसहमहां- ।
स्तथा भीमेशानाविति यद्भिधानाष्टकमिदं ।।
अमुस्मिन् प्रत्येकं विचरति देव श्रुतिरपि ।
प्रिया यास्मैधाम्ने प्रणिहित नमस्योऽस्मिभवते ।। २८ ।।

भावार्थ—हे देवेश्वर ! आप भव-शर्व-रुद्र-पशुपति-उग्र-महादेव-भीम-ईशान इन अष्ट नामों द्वारा प्रख्यात हैं। इन प्रत्येक नामों में वेद तथा देवगण सतत् गतिशील हैं–आपके इन नामाष्टक स्वरूप को मैं वारम्वार नमस्कार करता हूं, आपकी महिमाशक्ति की जय हो।

तत्वार्थ–हे देवाधिदेव, विश्व ब्रह्माण्ड में व्याप्त आपके अष्टधास्वरूप को सतत ध्यान करने वाले योगीजन आपके साक्षात् द्वारा जीवनमुक्त हो जाते हैं। अखिल ब्रह्माण्ड की आणिमा सूर्य और दीर्घजीवनप्रद षोड़श कलायुक्त चन्द्रमण्डल चौंसठ कलात्मक मनस्ततव और पञ्च तत्वात्मक पञ्च विग्रह ही अष्ट नामों से प्रख्यात हैं। आप **सूर्यमण्डल** स्वरूप भवरूप से पिङ्गला नाड़ी द्वारा कुण्डलिनी कुण्डस्थित अमृत को एकत्र कर सम्पूर्ण व्रह्माण्ड का जीवनपोषण करते हैं। अतः आप भव नाम से सुपूजित होते हैं स्वभक्तों के द्वारा। आप का शर्व नाम से प्रसिद्ध स्वरूप ही चन्द्र है जो मानवीय शरीर की **बहत्तर हजार नाड़ियों** को इड़ा नाड़ी द्वारा आप्यापित अमृत से सिंचन कर जीवनशक्ति को वढ़ाता है और भक्तों को आनन्द रश्मि द्वारा तेजस्वी कांति प्रदान करता है–आपकी जय हो। आपका रुद्र-स्वरूप, चौंसठ कलात्मक मनस्तत्त्व का प्रतीक है जो अल्पज्ञ साधकों को (**रू, उपसर्ग, द्र, द्रवयति सतत पांचल्येन**) भयंकर प्रतीत होता है। सद्गुरु कृपा से यथार्थ बोध होने पर यही रुद्र स्वरूप विश्वजयी एवं संकल्प सिद्धि भी शरणागत साधकों को प्रदान करता है। आपकी जय हो। पृथ्वी तत्वात्मक

आपका श्रीविग्रह पशुपति नाम से प्रख्यात है। जल तत्वात्मक आपका स्वरूप ही उग्र नाम से भक्तों द्वारा सुपूजित है। अग्नि तत्वात्मक स्वरूप का विप्रगण महादेव नाम से यजन कर सर्वोप्सित फल प्राप्त करते हैं। वायु तत्वात्मक आपका भयंकर भीमस्वरूप विश्व ब्रह्माण्ड का नियामक है जिसे हठ योगी सर्वदा चिन्तन करते हैं। आकाश तत्वात्मक आपका श्रीविग्रह ही ईशान नाम से विश्व-वंद्य हैं—दिव्य वीर साधक आपके इस स्वरूप का साक्षात् कर अन्तर्याग द्वारा श्री विद्येश्वर पद पर आरूढ हो देवगणों द्वारा वन्दनीय हो जाते हैं तथा श्रुति का सम्यक् बोध प्राप्त करते हैं- क्योंकि महदाकाश रूप से **नाद विन्दु पराध्वनि शब्दः** के मूल आप ईशान ही हैं। आपकी अत्यद्भुत अष्टधाप्रकृति स्वरूप की जय हो, जय हो। हे सदा-शिव ! आपके पृथ्वी तत्वात्मक स्वरूप का **श्री महाशक्त्यावरण मूलाधार भूपुर** में अन्तर्यजन करनेवाले पशुवीर भी अणिमादि अष्ट सिद्धियों को प्राप्त कर लेते हैं। आपके पशुपतिभाव साक्षात् द्वारा अष्टपाश विमुक्त हो साधक ज्ञानानन्द द्वारा विश्वजीवन से मुक्त हो जाते हैं—आपकी जय हो। हे पिता ! आपके जल तत्वात्मक स्वरूप की सतत धारणा से साधक स्वाधिष्ठानस्थ ब्रह्माणी आदि अष्टमातरों की कृपा से दिव्य भोगप्रद वामाचार का सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर कृतकृत्य हो जाता है—आपकी जय हो। हे सर्वेश्वर ! आपके अग्नि तत्वात्मक महादेव नाम से प्रसिद्ध स्वरूप का मणिपूर में श्री सम्वर्तेश्वर-नाथ नाम से भावात्मक अंतर्याग करने वाले दिव्य साधक **श्री अनंग कुसुमादि** अष्ट महायोगिनी की कृपा प्रसाद द्वारा

निष्पाप होकर सिद्धि लाभ करते हैं, आपकी विद्यामाया शक्ति की जय हो। हे जगदीश्वर ! आपके वायु तत्वात्मक भीमभूर्ति की हृद पद्मस्थ अष्टार में धारणा करनेवाले श्रेष्ठ साधक, आपके सामीप्यभाव को प्रत्यक्ष अनुभव कर ब्रह्माण्डव्यापी सर्वमनोरथ प्राप्त करते हैं आपकी वशिनी आदि महादिव्य योगिनीगणों के वात्सल्य प्रसाद द्वारा आपकी जय हो। हे प्रासादेश्वर मंत्रमूर्ते ! आपके ईशान नाम से विख्यात रूप को सिद्ध दिव्यवीर साधक सर्वदा श्री आनन्द भैरव नाम से महदाकाशस्थ विद्युत्प्रभामय त्रिकोण में अन्तर्याग कर आपकी श्री कामेश्वरी, श्री वज्रेशी, श्री भगमालिनी त्रिगुणात्मक प्रकृति का वरद स्पर्श प्रत्यक्ष अनुभव कर आपके सारूप्य भाव को प्राप्त होते हैं ; आपकी योगमायाशक्ति की जय हो।

इस श्लोक में आचार्य श्री पुष्पदन्त ने कुलपथ क्रम-पूजा और **श्री चक्र** के अन्तर्याग की हादिमत से कामकला साधना का वर्णन किया है यथा—**सूर्य चन्द्र** संकेत कुल कुण्डलिनी से आरम्भ कर आज्ञाचक्रस्थ चन्द्रमण्डल में विलीनीकरण-चन्द्र से प्रारम्भ क॰ भूपुरादि क्रम से महाविन्द्वाकाश पर्यन्त **श्री चक्रराज** का दिव्यवीर क्रम अनुलोम-विलोम अन्तर्याग। मेरे **स्वानुभव से ज्ञात** है आचार्य श्री ने इस श्लोक में प्रासादेश्वर बीज, कामकला बीज का भी मंत्रोद्धार वर्णमाला क्रम से प्रदर्शित किया है। सिद्ध सद्गुरु कृपा विना इस श्लोक में वर्णित सांकेतिक क्रम धारणा से अजितेन्द्रिय साधक के शरीरस्थ परमाणुओं में कभी भी विस्फोटक स्थिति उत्पन्न होने का भय है। केवल दिव्य वीरोपयोगी है यह ॥२८॥

बीजाक्षर 'न'; जप संख्या ५००० ; स्थान आज्ञाचक्र;

पूजा यँत्र

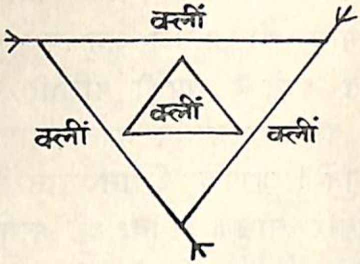

हवनीय-द्रव्य, चन्दन, पीत सरसों, दूर्वा गुगल, विल्वफल, घृत;
फलश्रुति–आरोग्य एवं विजयप्राप्ति ।

नमो नेदिष्ठाय प्रियदव दविष्ठाय च नमः ।
नमः क्षोदिष्ठाय स्मरहर महिष्ठाय च नमः ॥
नमो वर्षिष्ठाय त्रिनयन यविष्ठाय च नमोः ।
नमः सर्वस्मै ते तदिदमितिशर्वाय च नमः ॥२९॥

भावार्थ–हे शिव ! आप सभी जीवों के समीप हैं, आपको नमस्कार है । हे कामदेव को भस्म करनेवाले आप **महिष्ठ** अर्थात् बड़े हैं सभी देवों में–आप **वर्षिष्ठ** अर्थात् वयोवृद्ध भी हैं, आप **यविष्ठ** अर्थात् युवा भी हैं । हे महेश्वर ! आप अत्यन्त सूक्ष्मातिसूक्ष्म भी हैं–आपको नमस्कार है । सारे विश्व ब्रह्माण्ड में सूत्रात्मा स्वरूप से व्याप्त प्रभु आप लोकातीत हैं, भक्तों के के प्रिय हैं, आपको बारम्बार नमस्कार है मेरा ।

तत्वार्थ–हे परमपिता ! समस्त श्रेष्ठ साधकजन हृदय–पद्म में आपका अर्द्धनारीश्वर रूप में ध्यान करते हैं और आपके कृपा प्रसाद द्वारा विश्व प्राणीवर्ग के प्रिय हो जाते हैं, आपको बारम्बार नमस्कार है। दिव्य वीर साधक आपके स्मरहर स्वरूप का आज्ञाचक्र में अन्तर्याग कर कामजयी और आपके सदृश नित्य यौवनयुक्त हो जाते हैं और इच्छाजीवी हो आपका सतत चिन्तन कर कृतार्थ होते हैं। आपकी योगलीला की जय हो। हे त्रिनयन शिव आपका महत्तत्वात्मक स्वरूप का सहस्रार के अधोभाग में साक्षात् प्राप्त करने वाले महा-भाग्यशाली साधक आपके विशाल व्यापकत्व को अनुभव कर गद्गद् कण्ठ से **आपही विश्व में व्याप्त, शर्व,** स्वरूप हैं ऐसा उद्घोष उद्गार प्रकट करते हैं, आप की जय हो।

आचार्य श्री पुष्पदन्त ने इस श्लोक में कामराज त्रिकूट का बीजोद्धार और महाकामकला की अर्द्धमात्रा की गन्धर्वाचार क्रम साधना को वर्णन किया है। स्मर से कामबीज और हर से हरि बोधक ब्लूँ बीज का मन्त्रोद्धार संकेत किया है। महदा-काश स्वरूप महत्तत्व का प्रत्यक्षीकरण करने पर सूत्रात्मा (**विज्ञानमय कोश**) के व्यापकत्व को विश्व ब्रह्माण्ड में ओत-प्रोत देखकर **तत्त्वमसि** महावाक्य का सम्यक् ज्ञान प्राप्तकर कृतार्थ हो जाता है। इसी का आलंकारिक संकेत उपरोक्त श्लोक में है ॥२६॥

बीजाक्षर 'ब'; जप संख्या १०००; स्थान सहस्रार चक्र;

पूजा यंत्र

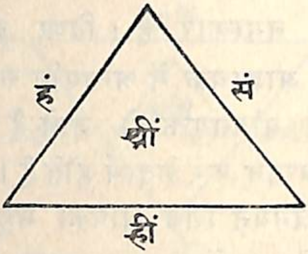

हवनीय–द्रव्य, पद्मपुष्प, त्रिमधु, द्राक्षाशर्करा;

फलश्रुति-दिव्यैश्वर्य प्राप्ति ।

बहल रजसे विश्वौत्पत्तौ भवाय नमो नमः ।
प्रबल तमसे तत्संहारे हराय नमो नमः ।।
जनसुखकृते सत्वोत्वत्तौ मृडाय नमो नमः ।
प्रमहसि पदे निस्त्रैगुण्ये शिवाय नमो नमः ।। ३० ।।

भावार्थ–हे शिव ! जगत् की उत्पत्ति हेतु रजोगुण के अधिष्ठाता भव आपको बारम्बार नमस्कार है । सृष्टि के संहार में तत्पर तमप्रधान मूर्त्तेहर आपको मैं नमन करता हूं । विश्व ब्रह्माण्ड के पालन हेतु सतोगुण विशिष्ट मृड नामके आपके श्रीविग्रह को बारम्बार नमस्कार है । त्रिगुणात्मक तत्वों से परे जो आपका स्वरूप है उसे बारम्बार नमस्कार है, आपकी जय हो, जय हो ।

तत्वार्थ–हे आनन्ददाता प्रभो ! स्वाधिष्ठान चक्र में रजोगुणात्मक रूप से आपके भवस्वरूप का श्रेष्ठ साधकजन स्तवन-यजन कर सृष्टि उत्पत्ति की आपकी योगक्रीड़ा का साक्षात्कार कर सफलमनोरथ होते हैं। आपकी जय हो । हे परमेश्वर ! आज्ञाचक्रस्थ आपके उन्मत्त हररूप की संहार (**लय-प्रधान**) क्रीड़ा का अनुभव प्राप्त करने वाले महाभाग्यशाली उपासक आपकी अत्यद्भुत **अण्वाणु विलीनीकरण क्रिया** नाट्य का दर्शन कर दिव्यैश्वर्य प्राप्तकर कृतार्थ हो जाते हैं। आपकी तमशक्ति की जय हो। हे विश्वम्भर! मणिपूर केन्द्रस्थित आपका चतुर्भुज श्रीविग्रह **मृड** दिव्यवीर साधकों को सत्व-प्रधान होने से अतिप्रिय है । सत्त्वगुण की शान्त स्पन्दगति **विद्याऽविद्या** रूप धारण कर विश्व ब्रह्माण्ड का पालन करती है–वर्तमान दृश्य स्थूल तत्वों की वृद्धि एवं पोषण करके । यह आश्चर्यजनक क्रीड़ा करने के कारण ही आपका योगीजन मृड नाम से बारम्बार स्तवन करते हैं। आपकी जय हो, जय हो।

श्री पुष्पदन्ताचार्य ने इस श्लोक में हादि विद्या का मंत्रोद्धार (**ह स ह ल ह्रीं**) का वर्णन किया है तथा लय योगभाव प्रक्रिया से **पञ्चदशी श्रीविद्या** का विस्तार संकेत किया है–यथा, शिवो-ह शक्ति, **स** प्रकृति **इ** का दिग्दर्शन **हसि पदे** शब्द से वर्णन किया है । **ह**, शिवात्मक **स**, शक्यात्मक, **ह**, व्यापक आकाश तत्वात्मक, **ल**, भ्वात्मक अतएव **ह स ह ल ह्रीं** कूट बनता है । हरिहर विरञ्चि प्रतीतात्मक इच्छा क्रिया ज्ञानरूपाशक्ति ही त्रिगुणात्मक रूप से प्रत्यक्षाभास होती

होती है लययोग साधकों को-आपकी जय हो। अत्यद्भुत सृजन-प्रधान आपकी दिव्यलीला की जय हो ॥ ३० ॥

बीजाक्षर 'क्व'; जप संख्या ५०००; स्थान विशुद्धिचक्र;
पूजा यंत्र

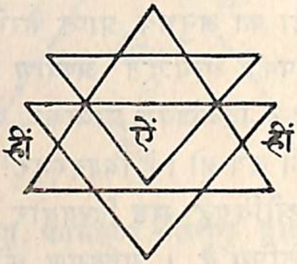

हवनीय–द्रव्य, दूर्वा,लाजा, विल्व, घृत, चन्दन;
फलश्रुति-सरस्वतोसिद्धि तथा स्वास्थलाभ।

कृशपारिणतिचेतः क्लेशवश्यं क्वचेदम्।
क्वचतवगुण सीमोल्लङ्घिनी शश्ववृद्धिः ॥
इति चकितममन्दी कृत्य मां भक्तिराधाद्।
वरद चरणयोस्ते वाक्यपुष्पोप हारम् ॥ ३१ ॥

भावार्थ–हे भगवन्! कृश परिणाम अथात् अत्यन्त मन्द और क्लेशों के वशीभूत मेरा चित्त स्मरण से विमुख है–गुणों की सीमा से परे आप सदाशिव को अनन्त ऋद्धिशक्ति का कारुण्य इस चकित दास को स्वभक्ति प्रदान कर **कृतार्थ** करेगा। नवीन स्फूर्ति, निष्ठा, दिव्य बुद्धि प्रदानकारी आपकी

शरण वत्सलता शक्ति की जय हो। हे वरद ! मैं अकिंचन साधनारहित अल्पबुद्धि आप के श्रीचरणकमलों में प्रार्थना रूपी पुष्पाञ्जलि अर्पित करता हूं —इसे स्वीकार कर इस दास को नामनिष्ठा प्रदान करें। आपकी गुणातीत आल्हादि शक्ति की जय हो।

तत्वार्थ—हे वरद ! अविद्या रूप अन्धकारमय जगत् में भक्तों को स्वात्म बोधरुप प्रकाश देने वाले महाकामेश्वर आपकी जय हो। हे गुणातीत देवेश्वर ! विशुद्धिचक्र में बाल चन्द्रकिरीटयुक्त आपका ध्यान करने वाले अल्पज्ञ साधक भी आपकी अनादि ऋद्धिकला का प्रकाश-कण प्राप्त कर दिव्य प्रज्ञामेधा के अधिकारी हो जाते हैं—आपकी जय।

हे नागेश्वर देव ! आपकी करुणर्द्र दृष्टिपात से ही घोर प्रापंचिक क्लेशयुक्त साधक का शुष्क जीवन-क्षेत्र स्फूर्ति, आल्हाद, ज्ञान, विज्ञान, बोधमय अमृतरस से परिपूर्ण हो गुणातीत हो जाता है—आपकी आश्चर्यकारक स्वभक्ताराधना शक्ति की जय हो, जय हो।

इस श्लोक में श्री पुष्पदन्ताचार्य ने दो वार **क्व** बीजाक्षर का संकेत, कादि विद्यान्तर्गत श्री वागेश्वरी परा रहस्य का दिग्दर्शन किया है (विशुद्ध चक्र में अन्तर्याग द्वारा अक्षय स्वास्थ एवं सरस्वतीसिद्धि लाभ होता है)। वर्णमाला प्रयोग से साधक शीघ्र ही नित्य यौवन एवं दिव्य मेधाशक्ति प्राप्त करता है। ३१ ॥

बीजाक्षर 'अ'; जप संख्या १०००; स्थान मणिपूर चक्र;

पूजा यँत्र

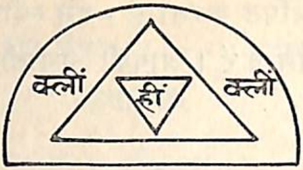

हंसः

हवनीय—द्रव्य,द्राक्षा, चन्दन, अनारपुष्प, नारिकेल, मधु, घृत;

फलश्रुति-सर्वार्थसिद्ध ।

असितगिरि समंस्यात् कज्जलं सिन्धुपात्रे ।
सुरतरुवरशाखा लेखनी पत्रमुर्व्वी ।।
लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्वकालं ।
तदपि तव गुणानामीश पारं न याति ।। ३२ ।।

भावार्थ—हे ईश ! कज्जल (स्याही) का पर्वत सदृश ढेर हो, समुद्र के समान विस्तृत गहरा पात्र हो (**स्याही घोलने के लिये**) कल्पवृक्ष की शाखा की लेखनी हो, पृथ्वीरूपी पत्र (**कागज**) हो-और श्रीसरस्वती इन साधनों के साथ स्वयं सर्वदा लिखती रहें। तब भी आपकी महिमा-गुणों का पूर्ण वर्णन नहीं कर सकती हैं। मैं अल्पज्ञ अल्पपठित मानव आपकी महान् महत्ता का वर्णन कैसे कर सकता हूं ?

तत्वार्थ—हे ईशानेश्वर! मूलाधारस्थ पृथ्वी तत्वात्मक आपके ज्योतिर्मयस्वरूप का अन्तर्यजन करने वाले साधक

विश्व के सम्पूर्ण भोगों को प्राप्त करते हैं-स्वर्णाभद्युति आप का बालस्वरूप काकिनी शक्ति सहित साधकों को यथेच्छ भोग प्रदान कर (सर्वोपकारकरणाय सदार्द्रचित्ता) सूक्ति को सार्थक करता है–आपकी दयाशीलता की जय हो। जल तत्वात्मक स्वाधिष्ठान चक्र में आपके नीलाभ स्वरूप की **श्री श्री सम्वर्त्तेश्वर नाथ समयाम्बा** नाम से आराधना करने वाले महाभाग्यशाली साधक कल्पवृक्ष के सदृश विश्व के मानव समुदाय को वर देने में समर्थ होते हैं–आपकी सृष्टिचक्र सृजनशक्ति की जय हो। हे आनन्द भैरव, आपका मणिपूर चक्र में अत्यद्भुत मायामयी **श्री पराम्बा** सह यजन करने वाले भाग्यशाली साधक देवदुर्लभ दिव्य भोगों का उपभोग करते हैं, आपकी जय हो। सिन्धु पात्र अर्थात् **श्रीकुल कुण्डलिनी गह्वर** में भुजङ्गाकृति आप की चिच्छक्ति का ध्यान करने वाले साधक विश्व ब्रह्माण्ड पर अधिकार प्राप्त कर आपके सारूप्य भाव को प्राप्त कर जीवनमुक्त हो जाते हैं। आपकी जय हो, जय हो।

इस श्लोक में आचार्य श्री ने श्री त्रिवलया साधन का गन्धर्वाचार क्रम से अन्तर्याग तथा प्रासाद वीजोद्धार वर्णन किया है। मणिपूरस्थ **कुलपथ** के द्वार पर तमपुंज का जो, अवरोध है उसे ही आचार्य श्री ने असित गिरि रूपालंकार से वोधित किया है। शारदा शब्द से स्वाधिष्ठान क्रिया शक्ति की अनुपयोगिता प्रदर्शित की है। जब तक कुल कुण्डलिनी उर्ध्वगामी न हो यथार्थ वोध नहीं होता ॥ ३२ ॥

असुर सुर मुनीन्द्रै रचितस्येन्दुमौले-
ग्रंथित गुण महिम्ना निर्गुणस्येश्वरस्य ।।
सकल गुण वरिष्ठः पुष्पदन्ताभिधानो ।
रुचिरमलघु वृतैः स्तोत्रमेतच्चकार ।। ३३ ।।

भावार्थ—असुरों, देवताओं, मुनियों से सुपूजित भगवान चन्द्रमौलि के इस स्तोत्र को शिखरिणी छन्द में सकल गुणों में श्रेष्ठ श्री पुष्प दन्ता चार्य गन्धर्व ने निम्मर्मिण किया भगवान श्री सदाशिव के प्रसन्नार्थ ।

तत्वार्थ—भगवान चन्द्रशेखर ! देव-असुर मुनिजनों के वन्दनीय प्रभो, आप सर्वतन्त्र स्वतन्त्र गुणातीत हैं, आपकी जय हो। महान श्रेष्ठ कौलावधूत जन-मूलाधार से आज्ञा-चक्र पर्यन्त आपके महान **प्राणात्मा सूत्र** स्वरूप का सूक्ष्मचिन्तन कर अपूर्व महिमा प्राप्त करते हैं-आपकी अमृत कला प्रवर्षिणी शक्ति की जय हो। हे देव ! भूपुर से महत्तत्त्व पर्यन्त चक्र-बोध धारणा को बृहत्त्स्वरूप में ग्रंथित (**विलय क्रम**) वीजन्यास के अभ्यासी दिव्यवीर ही आपकी त्रिगुणात्मक मायाशक्ति की प्रत्यक्ष लीला का साक्षात्कार कर आपका सारूप्य सान्निध्य प्राप्त कर कृतार्थ हो जाते हैं, आपको जय हो।

अहरहरन–वद्यं धूर्जटे–स्त्रोतमेतत् ।
पठति परमभक्त्या शुद्धचित्तः पुमान् यः ।।
स भवति शिवलोके रुद्रतुल्यः सदात्मा ।
प्रचुरतर धनायुः पुत्रवान् कीर्तिमांश्च ।। ३४ ।।

भावार्थ–हे अनादि देव ! जो मनुष्य श्रद्धापूर्वक नियमित आपके पूजन स्तोत्रपाठ को करते हैं–वह इस श्लोक में पूर्ण वैभव आयु युक्त श्रीमान् पुत्रों को प्राप्त करते हैं और अन्त में आपके स्वरूप में लीन हो जाते हैं।

तत्वार्थ—हे विश्व वन्दनीय प्रभो ! श्रेष्ठ साधक जन आपके घूर्जटि स्वरूप का यजन स्तवन स्वाधिष्ठान में कर दीर्घायु को प्राप्त होते हैं–आपकी जय हो, जय हो । हे परमात्मन् ! आपके प्रकाशमय श्री विग्रह का स्वाधिष्ठान में अन्तर्याग कर जो पवित्र चित्त साधक लयभाव से ध्यान करते हैं वे आपकी शक्ति सहित आदि नटनाथ स्वरूप का साक्षात् प्राप्तकर दिव्यैश्वर्य को भोगते हैं-आपकी पार्थिव रश्मि शक्ति की जय हो । हे महारुद्र ? जो श्रेष्ठ साधक आपके अर्द्धनारोश्वरलास्य भाव का ध्यान करते हुए हादि वर्णमाला क्रम से स्तवन करते हैं वह महाभाग साधक दीर्घायु ऐश्वर्यवान पुत्रों सहित जगत् में आपके समान कीर्त्तिवान होते हैं-आपकी वरद शक्ति की जय हो ।

दीक्षा दानं तपस्तीर्थं होम यागादिका क्रियाः ।
महिम्नस्तव पाठस्य कलांनार्हन्ति षोड़शीम् ।। ३५ ।।

भावार्थ-हे सदाशिव ! दीक्षा, दान, तप, तथा योगादि क्रियाएं, सभी आपके इस महिम्न स्तव के पाठ की सोलहवीं कला की भी समता नहीं कर सकती हैं आपकी जय हो । हे प्रभो ! आपके इस स्तोत्र पाठ द्वारा भक्त को शैव दीक्षा का श्रेयस्कर

पुण्य प्राप्त होता है–श्रेष्ठ दान-तपस्या-तथा तीर्थयात्रा पुण्य एवं योग-ध्यान-जन्य फल भी प्राप्त होता है, आपकी जय हो, जय हो।

तत्वार्थ–हे महाकामेश्वर रुद्र ! आपकी कृपादृष्टि के बिना महिम्नस्तोत्रान्तर्गत आपकी चिच्छक्ति श्री षोडशी कला (**श्री विद्या**) का ज्ञान नहीं होता है, आपकी जय हो। हे भक्त प्रतिपालक शिव ! शैव दीक्षा अथवा शाक्तदीक्षा प्राप्त करने पर भी पशुवीर-कला साधन से अनभिज्ञ रह जाते हैं। आपके महाकामेश्वर षोड़षी त्रिपुराम्बा स्वरूप का अनाहत में अन्तर्याग करने वाले महाभाग्यशाली साधकों को सर्वस्वदान का पुण्य-उग्रतप का फल सम्पूर्ण तीर्थों की यात्रा से प्राप्त होने वाला सत्संग विवेक–हवन द्वारा सद्य प्राप्त होने वाले फल तथा यागादिक द्वारा प्राप्त होनेवाली श्रद्धा निष्ठा अनायास उपलब्ध हो जाती है-आपकी जय हो।

हे आनन्द भैरव ! आप **शब्द ब्रह्म** के स्थूल पठन-चिन्तन सभी भक्तों को वर प्रदान करते हैं। आपके ज्योतिर्मय वाग्स्वरूप के कला ज्ञान से अनभिज्ञ साधक आपकी षोड्श कला चिच्छक्ति का कृपा प्रसाद प्राप्त क ने में असफल होते हैं–आपकी महत्कला शक्ति की जय हो। हे सर्वसिद्धिमय ! आपके चरणकमल, पञ्चतत्वात्मक केद्र विन्दु-महाकाश से परात् पर हैं। नित्य यौवनप्रद सृष्ट्यात्मक विश्वशक्ति कलाएँ आपकी लीला नाट्य क्रीडा ही है-आपकी भक्त मनोहारी महाशक्ति की जय हो।

समाप्तं तदिदं स्तोत्रं सर्वमीश्वर वर्णनम् ।
अनूपमं मनोहारिपुण्यं गन्धर्वभाषितम् ।। ३६ ।।

भावार्थ–हे परमेश्वर ! अनुपम और मन को हरनेवाला ईश्वरीय वर्णन युक्त पवित्र स्तोत्र श्री पुष्पदन्ताचार्य गन्धर्व ने आपको समर्पित किया है। भक्तों को आनन्दप्रद आपकी कीर्ति-शक्ति की जय हो।

तत्वार्थ–हे गन्धर्वाचार के आदि ऋषि ! आप अनन्त आनन्दप्रद परम पावन स्वराक्षर **ब्रह्म** स्वरूप हैं आपकी जय हो। श्रुतियों ने आपका सर्वोपरि **शब्दब्रह्म** स्वरूप से वर्णन किया है-आप स्मरण मात्र से, भक्तों को पुण्य प्रदान कर सर्व सुखप्रद शांति प्रदान करते हैं-आपके कृपा कटाक्ष से ही भक्तों (को **तदिदं**) तत्-वह **इदं** यह (**ईश्वर वर्ण**) शब्द ब्रह्म ही ईश्वर है, सृष्टि का आदि उद्गम है ऐसा दिव्य ज्ञान प्राप्त होता है। हे सर्वश्रेष्ठ आप्त पुरुष ! आपकी कृपादृष्टि द्वारा ही साधकों को स्वरूप बोध होता है, आपकी जय हो। सौन्दर्य-मूर्त शिव ! जो श्रेष्ठ साधक आपके (दिव्य शब्दकाय) का आज्ञाचक्र में सतत ध्यान करते हैं वे निष्पाप हो आपके अभेद स्वरूप का साक्षात् प्राप्तकर देव दुर्लभ ईश्वरत्व (**श्री विद्येश्वर**) पद को प्राप्त करते हैं–आपकी अत्यद्भुत भक्त वत्सलता की जय हो, जय हो।

महेशान्नापरो देवो महिम्नोनापरा स्तुति ।
अघोरान्नापरो देवो नास्ति तत्वं गुरोः परम् ।। ३७ ।।

भावार्थ–हे परमपिता प्रभो ! आपसे श्रेष्ठ कोई देव नहीं है–सृष्टि में–महिम्न से श्रेष्ठ कोई स्तुति नहीं है। अघोर मंत्र से परे कोई मंत्र नहीं है और श्री सद्गुरु से श्रेष्ठ कोई तत्त्व नहीं है विश्व ब्रह्माण्ड में।

तत्वार्थ–हे जगदीश्वर ! आप की शिव शक्ति से भिन्न कोई भी देवता भक्तों के सभी मनोरथ पूर्ण करने में समर्थ नहीं हैं-आपकी योगमाया शक्ति की जय हो जय हो। हे विश्वम्भर ! महिम्न स्तवराज के प्रत्येक श्लोक में श्री पराशक्ति का ही स्तवन रहस्य पूर्णभाव से वर्णन किया गया है-जो श्रेष्ठ साधकों को भोग एवं योग की तत्काल सिद्धि प्रद है-आपकी अहैतुकी कृपाशक्ति की जय हो।

हे सिद्धेश्वर शिव ! षट्चक्रस्थ अन्तर्याग करने वाले श्रेष्ठ साधक भौतिक सिद्धि प्राप्त्यर्थ पश्चिम्नाय से आपके अघोर मंत्र का जप कर विविध भोगप्रद सिद्धिलाभ प्राप्त कर कृतार्थ हो जाते हैं-दिव्य वीर श्रेणी के श्रेष्ठ साधक जन भी ऊर्ध्वाम्नाय से अघोर मंत्रराज का सम्यक् अर्चन-ध्यान कर देव-दुर्लभ श्री गुरु मण्डल का साक्षात्कार कर जीवन मुक्त हो जाते हैं-आपकी गुरु तत्वशक्ति की जय हो। **हे जगद्गुरु शिव !** आपने सृष्टि के साधक वर्ग के कल्याण हेतु करुणार्द्रचित्त से **(द्विपञ्चाशत्)** बावन मातृका बीजाक्षरों का **७२ मँत्रविस्तार** कोटि **श्री गुरुपद** का यथार्थ बोध कराया है-विश्व मानवों को। श्री गुरु मण्डल में श्री भगवान मेघेश्वर नाथ और श्री अमृतेश्वराम्बा शक्ति रूप में आप साधकों के ऊपर अमृत वर्षाकर

त्रिताप हरण करते हैं–आपकी दिव्य सहस्रार भाव लीला की जय हो।

कुसुमदशन - नामा सर्वगन्धर्वराजः ।
शशिधरवर मौलेर्देवदेवस्य दासः ॥
सखलु निज महिम्नो भ्रष्ट एवास्य रोषात् ।
स्ववन मिदमकार्षीद्दिव्यदिव्यं महिम्नः ॥ ३८ ॥

भावार्थ–श्री पुष्पदन्त नामक सभी गन्धर्वों के राजा–नवीन चन्द्रमुकुट धारण करने वाले देवाधिदेव श्री शिव के दास थे। जब जगद्गुरो श्री महादेव के क्रोध से पुष्पदन्त अपने पद अधिकार से च्युत हुए–तब श्री सदाशिव के प्रसन्नार्थ इस परम दिव्य महिम्न स्तोत्र की रचना की। आपकी भक्तवत्सलता की जय हो।

तत्वार्थ–हे देवाधिदेव जगद्गुरो ! श्रेष्ठ साधकों द्वारा (**गन्धर्व-राजः**) गन्धर्वाचार क्रम से सुपूजित होने पर आप सद्य प्रसन्न होते हैं–आपकी राजस् तत्वप्रधान शक्ति की जय हो। हे वरद ! आपके चन्द्र किरीटी श्री योगेश्वरानन्दनाथ स्वरूप का श्री योगमायाम्बा शक्ति सहित स्तवन करने वाले दिव्य वीरों की देवगण भी दासवत् सेवा करने में तत्पर रहते हैं–आपकी अत्यद्भुत वरदायिनी शक्ति की जय हो। हे महादेव ! आपको विजय करने की इच्छा से (**कुसुम दश**) पञ्च कर्मेन्द्रिय पञ्च-ज्ञानेन्द्रिय रूप वाणों से गन्धर्वराज (**मनस्तत्व**) ने तीव्र चेष्टा की तो आपके क्रोध द्वारा वह दिव्य क्षेत्र सहस्रार से च्युत होकर

भोग-प्रधान–वासनात्मक मूलाधार चक्र में अवरुद्ध हो गये थे– पुनः आपकी अनन्य करुणा द्वारा परमानन्दप्रद सहस्त्रारस्थ महदाकाश में सुप्रतिष्ठित हुए, आपकी करुणाशक्ति की जय हो।

इस श्लोक में कुसुम का **क** एवास्य का **ए** इदम् **इ** खलु का **ल** दिव्यदिव्यं **ह्रीं** इस प्रकार कादि विद्या का **क ए इ ल ह्री** कामकूट बीज का दिग्दर्शन किया है ।। ३८ ।।

सुरवर मुनि पूज्यं स्वर्गमोक्षैक हेतुम् ।
पठति यदि मनुष्यः प्राञ्जलिर्नान्य चेतः ।।
व्रजति शिवसमीपं किन्नरैः स्तूय मान ।
स्तवनमिद-ममोघं पुष्पदन्त प्रणीतम् ।। ३६ ।।

भावार्थ—श्री पुष्पदन्त रचित यह अमोघ स्तुति देवताओं-ऋषियों द्वारा वन्दनीय है और स्वर्गीय भोग और मोक्ष प्रदान करने वाली है। जो भक्त श्रद्धान्वित चित्त से हाथ जोड़कर इसे पढ़ता है। वह सब सुखों को भोगकर अन्त में किन्नरों द्वारा प्रसंशित होकर भगवान् शिव के धाम को जाता है। श्री सदा-शिव की कृपा शक्ति की जय हो, जय हो।

तत्वार्थ—हे भगवान शिव ! जो साधक श्रद्धापूर्वक चित्ता-काश में आपके योगस्थ स्वरूप का चिन्तन करते हुए मानस अञ्जलि मुद्रा में पद्मपुष्प अर्पित करते हैं वह भाग्यवान् साधक देवताओं-ऋषियों में पूजनीय हो जाते हैं। और आपके कृपा प्रसाद द्वारा स्वर्ग में उपलब्ध जिन भोगों को देवगण भोगते हैं वे भोग उन साधकों को इस पृथ्वी पर ही प्राप्त हो जाते हैं-

आपकी महिमा शक्ति की जय हो। हे दयार्द्रचित्त शंकर! मैं स्वर्ग एवं मोक्ष के हेतु पुण्य और पाप प्रतीक सभी कर्मों को आप जगदीश्वर के श्रीचरणों में अर्पित करता हूं। इस आत्मसमर्पण धारणा से साधक आपके दिव्य कैलाश धाम को प्राप्त करता है, आपकी करुणा शक्ति की जय हो, जय हो।

श्री पुष्पदन्त मुख-पंकज निर्गतेन ।
स्तोत्रेणकिल्विष हरेण हर-प्रियेण ।।
कण्ठास्थितेन पठितेन समाहितेन ।
सुप्रीणीतो भवति भूतपतिर्महेशः ।। ४० ।।

भावार्थ–आचार्य श्री पुष्पदन्त के मुख कमल से निकले हुए इस पाप नाशक, भगवान् श्री शिव के प्रिय स्तोत्र का कण्ठस्थ पाठ करने से सम्पूर्ण सृष्टि के स्वामी भगवान् भूतनाथ भक्त पर प्रसन्न होते हैं।

तत्वार्थ–हे परमेश्वर! शान्त चित्त से विशुद्धिचक्र में आपके पञ्चभूताधिप श्री पञ्चानन महाकाल स्वरूप का यजन करने वाले श्रेष्ठ साधक आपकी कृपा से दिव्यैश्वर्य प्राप्त करते हैं, आपकी वरद शक्ति की जय हो, हे सिद्धेश्वर शिव! आपके मुख कमल द्वारा सम्पूर्ण विद्या कलाएं प्रकट हुई हैं, ऐसा जानकर ध्यान करने वाले साधक आपके पञ्चाम्नाय बोधक तंत्र-ज्ञान को प्राप्त कर विद्या सिद्धि रूप दुर्लभ फल प्राप्त करते हैं–और उनके सभी मनोरथ सफल होते हैं, आपकी जय हो।

हे सर्वपापहर भूतनाथ ! इस सृष्टि चक्र के अलङ्घनीय, निरन्तर गतिशील कालचक्र के नियामक आप महाकाल हैं। ऐसा एकाग्र चिन्तन करने वाले योगीजन देव दुर्लभ श्री विद्या के रहस्य को जानकर दिव्य भोगों को भोगकर **आनन्दमय कोश** विज्ञान के साक्षात्कार से निष्पाप होकर आपके प्रिय हो जाते हैं–आपकी अत्यद्भुत योगमाया शक्ति की जय हो।

इत्येषा वाङ्मयी पूजा श्रीमच्छंकर पादयोः ।
अर्पितातेन मे देव प्रीयतां च सदाशिव ।। ४१ ।।

भावार्थ–हे जगदीश्वर ! इस शब्दमय पूजा को मैं आपके कल्याणकारी श्री चरणों में अर्पित करता हूं। हे सदाशिव आप मुझपर प्रसन्न होकर सबुद्धि तथा दिव्यैश्वर्य प्रदान करें।

तत्वार्थ–हे सदाशिव ! आप विश्वव्यापी वाङ्मय स्वरूप हैं। आपके शब्द ब्रह्म स्वरात्मक स्वरूप पर ध्यानावृत्ति में मन स्तत्व को अर्पित करने वाले साधक ज्ञान विज्ञान के अत्यद्भुत विस्तृत स्वरूप का साक्षात्कार कर आनन्द रस से परिपूर्ण हो जाते हैं–आपकी नाद शक्ति की जय हो। हे कल्याणकारी रुद्र ! आप वेदादि श्रुति के मूलाधार हैं–आपके नृत्य-नाट्यकाल में डमरू वादन द्वारा स्वर अक्षर रूप **मातृका वर्णों** का प्रादुर्भाव हुआ है। आपकी सृजनात्मक महाशक्ति की जय हो।

हे विश्वपिता महादेव ! विश्व विख्यात नित्य ज्योतिमय वाङ्मय रूप की (**षट्चक्रस्थ वर्णमाला**) यजन धारणा करने

वाले श्रेष्ठ साधक ही यथार्थ में आपकी कृपा शक्ति के अधिकारी होते हैं और इस पृथ्वी पर दिव्य भोगों को प्राप्त कर अन्त में आपके देव दुर्लभ श्री चरणों में लीन होते हैं, आपकी भक्तवत्सलता की जय हो।

यदक्षरं पदभ्रष्टं मात्रा हीनं च यद्भवेत् ।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव प्रसीद परमेश्वर ।। ४२ ।।

भावार्थ–हे परमेश्वर! यदि कोई अक्षर पदभ्रष्टया मात्राहीन हो तब आप मेरी सभी त्रुटियों को क्षमाकर मुझपर प्रसन्न होवें।

तत्वार्थ–हे पञ्चवक्त्र नीलकण्ठ ! जो साधक हठ-योगोक्त प्राणशक्ति निरोधक्रिया द्वारा **कायव्यूह चक्रों** में आपके निर्गुण स्वरूप का ध्यान करने का प्रयत्न करते हैं उन **पशु वीरों** को आप क्षमा करें। क्योंकि बलपूर्वक प्राण निरोध द्वारा **चक्रस्थ वर्ण बीजों** में कम्पन एवं स्थान–च्युति तथा–(**मात्रा हीनता**) गतिवृत्त ह्रास होता है–जिससे सृष्टि के मूलाधार आपके वाङ्मय स्वरूप में विक्षेप होने से साधक नष्ट भी हो सकता है। आप उन चंचल बुद्धि साधकों की इस उदण्डता को क्षमा करें–आपकी क्षमा शक्ति की जय हो, जय हो।

अनन्त श्री विभूषित सिद्ध योगी साक्षात् शिवस्वरूप सद्गुरु देव श्री मुनीन्द्र हेड़ाखान बाबा के स्नेहमय कृपा प्रसाद द्वारा **विश्व शैव सम्प्रदाय** के समस्त भक्तों तथा **श्री विद्या सम्प्रदाय के वीर भाव** साधकों के आनन्दार्थ यह रचना **श्री शिवशक्तयात्मक** सद्गुरु देव को सौंपता हूं। **शन्नो शैव शाक्ताः।**

भाष्यकार परिचय

काश्मीर सिमिलायां मद्रिफलपुरम् नगरः
वसन्ति मण्डुकी तटे ।
तत्र स्थितः भारद्वाज श्री कन्हैयालाल शर्म्मणः ॥
तस्यात्मजः योगीराजः श्री शास्त्री विद्येश्वरः ।
कूर्माचंलस्थ सिद्ध - योगी श्री मुनीन्द्र हेड़ा
खानस्य श्रेष्ठ शिष्यः ॥
श्री सद्‌गुरो प्रसादात् प्राप्तसिद्धिः शैवागम-
श्चवसर्वेशाक्त तँत्राः ।
द्वि सहस्रगुणवसु विक्रमाब्दे जन्माष्टमीशाक्त
पर्वणिमन्दवासर ॥
नेपाल काष्ठ मण्डप मार्ग पुत्तली भाष्य पूर्ण कृता
शैव शाक्तः प्रमोदयितुम् ।
पठन्ति ध्यायान्ति ये प्रशान्त मनसा स सिद्धि-
भाग् कामेश्वर प्रतापम् ॥
नमामि श्री शिवावतार मुनीन्द्रः हेड़ाखान देवं
हिम शृंग विहार कर्त्ताम् ॥
कर्मयोग प्रवक्ता गुणातीतम् स्वयम्भू मूर्तिमान्
योगदर्शन विश्वभर्ताम् ॥

परिशिष्ट

शिवमहिम्न स्तोन्त्रान्तर्गत प्रमुख कथा बीजों का सन्दर्भ-सूत्र

स्त्रोत क्र०	कथा	सन्दर्भ
१४	**कालकूट महाविष की**	शिवपुराण सनत्कुमार, सं० अ० ५१, मत्स्य पु०, अ० २५०, स्कन्दपुराण माहेश्वर खण्ड, अ० ६,१०
६	**नास्तिक्यनिराकरण**	शिव पु० वायवीय, सं० अ० २६
१५	**मदनदहन कथा**	स्कन्द पु०, माहेश्वर खण्ड, अ० २१ तथा प्रभास खण्ड अ० २००, शिवपुराण ज्ञान संहिता, अ० ११ एवं धर्म सं० अ० से १४ तक, मत्स्य पु० अ० १५४
३८	**पुष्पदन्तेश्वर कथा**	स्कन्द पु०, प्रभास खण्ड, प्रभास माहात्म्य, अ० १८०
३१	**भक्ति वर्णन**	स्कन्द पु०, ब्रह्म सं० के ब्राह्मोत्तर खण्ड अ० १४, शिव पु० वायवीय सं०, उत्तरार्द्ध अ० ८ तथा शिव पु०, ज्ञान सं० अ० ७, ८
२०	**दक्षकथा उपोद्घात**	शिव० पु० वायवीय, सं० अ० १६ से २० तक

२१ दक्षयज्ञ बिद्धंस	स्कन्द पु०, माहेश्वर खण्ड, अ० १ से ५ तक, प्रभास खण्ड अ० १६६ और काशी खण्ड अ० ८७, ८८, ८९
२७ ओऽम्कार वर्णन, त्रयी-वर्णन	शिव पु०, कैलास, सं० समग्र, ज्ञान सं० अ० ३, वायवीय सं० उत्तर भाँग अ० ७, सत्कुमार सं० अ० ३२, स्कन्द पु० नागर ख० अ० १९९
३० रूद्र सृष्टयादि वर्णन	शिव पु०, वायवीय, सं० पूर्व भाग अ० १२
२८ भव शब्द व्युत्पत्त्यादि	कूर्म पु०, ब्राह्मी सं० पूर्वाद्धि अ० १५ तथा स्कन्द पु० प्रभास खण्ड, वस्त्रापथ ख अ० २,९
३ शिव का शब्दमय होना	शिव पु०, ज्ञान संहिता अ० ३
२५ योग वर्णन (योग)	शिव पु०, सनत्कुमार, सं० अ० ४०, ५७, ५७ तथा शिवपुराण विद्येश्वर, सं० अ० २
१६ हर ताण्डव कथा	स्कन्द पु०, नगर खण्ड, अ० २५४
३७ अघोर कल्प	शिव पु०, धर्म संहिता, अ० ४०
८ भस्म प्रशंसा	स्कन्द पुराण, ब्राह्म खण्ड, ब्राह्मोत्तर खण्ड अ० १५, १६, १७, शिव पु०, सनत्कुमार संहिता, अ० २९
१३ वाणासुर कथा	मत्स्य पु०, अ० १८८ तथा शिव, पु० धर्म सं अ० ७
१८ त्रिपुरदाह	स्कन्द पु०, आवन्त्य खण्ड, आवन्ती खण्ड, अ० ४३, मत्स्य पु०, अ० १२९ से अ० १४०

	पर्यन्त, शिव पु० धर्म सं० अ० ३ सनत्कुमार सं० अ० ५२, ५३ ५४, ज्ञान सं० अ० २४
१७ **गंगा महात्म्य**	स्कन्द पु०, काशी खण्ड, अ० २७, २८, पुनः स्कन्द पु० आवन्ती खं० चतुरशीतिलिङ्ग महात्म्य अ० ४२ और नागर खण्ड, हाट-केश्वर, क्षेत्र माहात्म अ० १३०
४० **पुष्पदन्तेश्वर कथा**	स्कन्द प्र०, प्रभास खण्ड, प्रभास माहात्म्य अ० १८० तथा श्रावन्त्य खण्ड अ० ७७

श्री शिव महिम्न स्तवराज योग तन्त्र भाष्य श्री विघ्नेश्वर योगीराज श्री शक्तिदत्त शास्त्री